पंजीयन संख्या : 68939/98

ज्ञान तत्व

सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भीक पाक्षिक

MAY 2025

अंक - 8

471

महिला पुरुष संबंध और सेक्स की भूमिका 4

"... नैतिकता के उच्च मापदंड संस्कार द्वारा समाज को दिए जा सकते हैं, कानून के द्वारा नहीं। यह सिद्धांत बनाने की जरूरत है। नई समाज व्यवस्था में हम सेक्स को मौलिक अधिकार मानते हैं। सेक्स की पूर्ति में राज्य या समाज को किसी भी प्रकार से बाधा नहीं पैदा करनी चाहिए,. . "

हिन्दू-मुसलमान 5

"...यदि सभी मुसलमान आतंकवादी हैं, तो आतंकवाद का विरोध करने में सारे मुसलमान अपने आप शामिल हो जाएंगे। हमें हिंदू और मुसलमान का विभाजन करने की कोई जरूरत नहीं है।..."

भारत पाकिस्तान 6

MARGDARSHAK

प्रकाशन की तिथि - 15--0 5-2025 पोस्ट की तिथि - 1--6-2025

सिंहावलोकन

8 **मेरी अपनी बात**

9 **भारत की प्रमुख समस्याएँ और राजनीति के दस नाटक**

9 **न्यायपालिका और संविधान**

वर्तमान भारत में संविधान गुलाम है। हमारे संसद और न्यायपालिका, संविधान पर कब्जा करने की लड़ाई लड़ रहे हैं।

10 **भारत की प्रमुख समस्याएँ और समाधान**

11 **पत्रोत्तर**

11 **ज़ूम चर्चा कार्यक्रम**

13 **'छुआछूत': सुचिता से शोषण तक का सफर**

पत्र व्यवहार का पता

बजरंग लाल अग्रवाल पोस्ट बाक्स 15, रायपुर (छ.ग.) 492021

website : margdarshak.info

प्रकाशक, संपादक व स्वामी - बजरंगलाल

9617079344

mail : Support@margdarshak.info

ज्ञान केन्द्र विचार, समन्वय और परिवर्तन के तीर्थ

नयी समाज व्यवस्था

समाचार है कि एक तीन-चार वर्ष की मरणासन्न जैन लड़की ने संथारा के माध्यम से आत्महत्या की। इस मामले में कानूनी एजेंसियां सक्रिय हो गईं, जबकि वास्तविकता यह है कि उस लड़की ने और उसके परिवार ने कुछ भी गलत नहीं किया था। मेरे विचार से आत्महत्या प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता है। जिस तरह व्यक्ति को जीने का अधिकार है, उसी तरह व्यक्ति को मरने का भी अधिकार है। व्यक्ति को मरने से परिवार रोक सकता है, समाज रोक सकता है, सरकार नहीं रोक सकती क्योंकि सरकार न किसी को जीवन देती है, न ले सकती है। सरकार किसी की स्वतंत्रता में बाधा पैदा नहीं कर सकती। हम नई संवैधानिक व्यवस्था में आत्महत्या के संबंध में वर्तमान सभी कानून समाप्त कर देंगे। आत्महत्या करना या नहीं करना, यह व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता है। उस स्वतंत्रता में कोई भी बलपूर्वक बाधा पैदा नहीं कर सकता। हमारा सुप्रीम कोर्ट भी कई बार इन मामलों में दुविधाजनक निर्णय दे चुका है, लेकिन मेरे विचार से यह दुविधा समाप्त होनी चाहिए। आत्महत्या को व्यक्तिगत स्वतंत्रता में सम्मिलित किया जाना चाहिए। हम नई व्यवस्था में आत्महत्या को व्यक्तिगत स्वतंत्रता में शामिल करेंगे।

हम नई समाज व्यवस्था में किसी भी प्रकार की हिंसा करने या हिंसा के समर्थन का विरोध करते हैं। समाज में किसी भी प्रकार की हिंसा का समर्थन नहीं किया जा सकता। हमारे जो भी धर्मगुरु शस्त्र रखने की सलाह देते हैं या हिंसा करने की आवाज उठाते हैं, इस प्रकार के धर्मगुरुओं का या तो बहिष्कार होना चाहिए या उन्हें सेना-पुलिस में भेज देना चाहिए। मैं इस बात का प्रबल समर्थक हूं कि लोकतंत्र में समाज को किसी भी प्रकार की हिंसा का समर्थन नहीं करना चाहिए। जो भी लोग पुलिस वालों पर या अन्य सरकारी विभागों पर हमले करते हैं, वह पूरी तरह गलत है। इस प्रकार के लोगों का भी किसी भी रूप में समर्थन नहीं किया जाना चाहिए। किसी अन्याय के बदले हमें व्यवस्था का ही सहारा लेना चाहिए, बल प्रयोग का नहीं। दूसरी ओर, सरकार को अधिकतम बल प्रयोग करने की छूट होनी चाहिए। हमारी सरकार हमारी सुरक्षा करने के लिए बाध्य है, यह उसका दायित्व है, स्वैच्छिक कर्तव्य नहीं। हम लगातार सरकार पर दबाव बनाएंगे कि सरकार हमें सुरक्षा की गारंटी दे। आज प्रातःकाल हमारी भारत सरकार ने पाकिस्तान पर जिस तरह की एयर स्ट्राइक करके जवाब दिया है, वह हमें इस बात का विश्वास दिलाता है कि सरकार मजबूती से हमारे साथ खड़ी है। जिस तरह सरकार पाकिस्तान के साथ या विदेश के साथ मजबूती से खड़ी है, उसी प्रकार सरकार को भारत की आंतरिक व्यवस्था में भी अपराधियों पर मजबूती के साथ आक्रमण करना चाहिए। हमें सुरक्षा और न्याय चाहिए, और वह सुरक्षा और न्याय सरकार के माध्यम से चाहिए, राजनीतिक व्यवस्था के माध्यम से चाहिए। धर्मगुरुओं की लफाजी से नहीं।हम नई समाज व्यवस्था पर लगातार चर्चा कर रहे हैं। इस व्यवस्था में परिवार सबसे प्रमुख इकाई होगा। यदि परिवार का कोई सदस्य अपराध करता है, तो उस अपराध के लिए पूरा परिवार जिम्मेदार होगा। किसी भी प्रकार के मुकदमे का यदि आपस में समझौता हो जाता है और उस समझौते को पीड़ित पक्ष की ग्राम सभा स्वीकार कर लेती है, तो समझौता सरकार के लिए बाध्यकारी होगा, चाहे मामला किसी भी प्रकार का क्यों न हो। उसमें न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा। यदि किसी प्रकार के आपराधिक मामले में पुलिस कोई निर्णय देती है और वह निर्णय सब लोग मान लेते हैं, तो न्यायालय उसमें कोई हस्तक्षेप नहीं करेगा। यदि न्यायालय में कोई व्यक्ति बिल्कुल सच बोल देता है, तो उस सच बोलने वाले को दंड में रियायत भी दी जाएगी। इस तरह सच और झूठ के महत्व को समाज में बढ़ाया जाएगा। मेरे विचार से परिवार व्यवस्था को मजबूत कर देने से न्यायपालिका का बोझ बहुत कम हो जाएगा, मुकदमेबाजी घट जाएगी, पुलिस का हस्तक्षेप भी कम हो जाएगा, और सामाजिक पंचायतें भी सक्रिय हो जाएंगी। हमें पुलिस और न्यायालय के हस्तक्षेप को कम करने का कोई न कोई तरीका खोजना होगा, और मुझे जो तरीका पसंद आया, वह मैंने आपको लिख दिया है।

नई समाज व्यवस्था में सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत किसी भी व्यक्ति को किसी भी आधार पर बहिष्कार करने की स्वतंत्रता होगी। कोई भी सामाजिक इकाई कानून से हटकर किसी व्यक्ति को दंड नहीं दे सकती। स्पष्ट है कि किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन दंड होता है, सामाजिक अधिकारों का उल्लंघन बहिष्कार होता है। नई व्यवस्था में बहिष्कार किया जा सकता है, लेकिन दंड नहीं दिया जा सकता। दंड तो केवल सरकार ही दे सकती है। यह बहुत बड़ी गलती हुई वर्तमान व्यवस्था में कि सरकारों ने बहिष्कार पर प्रतिबंध लगा दिया और समाज दंड भी देने लग गया। यह दोनों ही बातें गलत हैं। समाज सिर्फ बहिष्कार तक सीमित रह सकता है, दंड तो सिर्फ सरकार ही देगी। इसलिए नई समाज व्यवस्था में बहिष्कार का सामाजिक अधिकार फिर से लागू किया जाएगा क्योंकि सामाजिक अनुशासन बनाए रखने के लिए बहिष्कार जैसे शस्त्र का उपयोग उचित है। वर्तमान संवैधानिक व्यवस्था में छुआछूत को एक अपराध घोषित कर दिया गया, जो पूरी तरह गलत है। छुआछूत एक सामाजिक बुराई है और उसे समाज से ही दूर किया जाना चाहिए, कानून से नहीं। किसी व्यक्ति को छूना या नहीं छूना, यह व्यक्ति की स्वतंत्रता है, इसमें कानून कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता।भारत वर्ण व्यवस्था का देश रहा है। यहां राजनेताओं के पास सर्वोच्च शक्ति होती है, लेकिन वह शक्ति विचारों द्वारा अनुशासित भी होती है। समाज पर विचारों का प्रभाव होता है और राज्य पर राजनेताओं का। गांधी एक गंभीर विचारक थे, लेकिन स्वतंत्रता के बाद राजनेताओं ने षड्यंत्र करके एक मूर्ख से गांधी की हत्या करा दी, और उसके बाद राजनेता सर्वशक्तिशाली बन गए। स्वतंत्रता से लेकर अब तक कभी राज्य पर विचारकों का कोई प्रभाव नहीं रहा, बल्कि तथाकथित विचारक राजनेताओं के सामने दुम हिलाते नजर आए। संत विनोबा भावे ने इस महत्व को समझते हुए ही आचार्य कुल की शुरुआत की थी, लेकिन राजनेताओं ने विनोबा जी को भी दबा दिया। लेकिन यह पहली बार है कि पिछले पांच-सात वर्षों से भारत की राजनीति में विचारों का महत्व बढ़ रहा है। आज भारत में यदि राज्य का नेतृत्व नरेंद्र मोदी कर रहे हैं, तो समाज का नेतृत्व मोहन भागवत कर रहे हैं, और मोहन भागवत तथा मोदी दोनों ही मिलकर नीतियां बना रहे हैं। यह पहली बार हो रहा है कि भारत में लोकतंत्र का एक नया भारतीय अध्याय लिखा जा रहा है। आज भारतीय समाज पर जितना प्रभाव संघ का है, संघ प्रमुख का है, उतना तो शंकराचार्यों का भी नहीं है, और भारत का प्रधानमंत्री संघ प्रमुख के विचारों का पूरा सम्मान और महत्व देता है। ऐसा स्वतंत्रता के बाद भारत में भी कभी नहीं हुआ, और आमतौर पर दुनिया में भी नहीं हुआ है। इसलिए मुझे इस बात की खुशी है कि भारत लोकतंत्र का एक नया संस्करण प्रस्तुत कर रहा है, जिसमें राज्य सत्ता पर विचारों का समुचित महत्व है। नई समाज व्यवस्था में संविधान निर्माण में विचार की महत्वपूर्ण भूमिका होगी। राजनेता संविधान के अनुसार कार्य करने को बाध्य होंगे। राज्य कभी उद्दंड न हो, इसकी जिम्मेदारी समाज की होगी। समाज का नेतृत्व विचारक करेंगे। वर्तमान में समाज का नेतृत्व मोहन भागवत कर रहे हैं, और भारत की इस नई राजनीतिक-सामाजिक व्यवस्था को निरंतर मजबूत करने की जरूरत है।

महिला पुरुष संबंध और सेक्स की भूमिका

नई संवैधानिक व्यवस्था में सभी कानून पूरी तरह जेंडर मुक्त होंगे। महिला और पुरुष के अलग-अलग अस्तित्व नहीं माने जाएंगे, सभी एक व्यक्ति के रूप में माने जाएंगे। विवाह के संबंध में सरकार कोई कानून नहीं बनाएगी। परिवार एक इकाई होगा, परिवार के सदस्य व्यक्ति होंगे, चाहे उसमें महिला हो या पुरुष। सेक्स के संबंध में भी सरकार कोई कानून नहीं बनाएगी, बलात्कार के संबंध में भी अलग से कोई कानून नहीं बनेगा। बलपूर्वक किया गया कोई भी कार्य अपराध होगा, चाहे वह पुरुष के साथ पुरुष करें या महिला और पुरुष के बीच हो। इस तरह महिला और पुरुष के सारे कानून समाप्त कर दिए जाएंगे। विवाह को एक सामाजिक विषय माना जाएगा, विवाह को एक समाज का आंतरिक मामला माना जाएगा, कानूनी मामला नहीं।

नई समाज व्यवस्था में हम सेक्स को कम संवेदनशील विषय बनाने की सोच रहे हैं। वर्तमान समय में सेक्स के मामले में समाज का हस्तक्षेप बहुत अधिक है। समाज का कोई भी व्यक्ति किसी भी ऐसे मामले को बहुत अधिक संवेदनशील बनाकर उस पर टिप्पणी करना शुरू कर देता है, जो बहुत घातक है। वह यह नहीं समझता कि सामाजिक नियमों से हटकर सेक्स किन परिस्थितियों में किया गया। वर्तमान समय में सामाजिक नियम भी अव्यावहारिक दिखते हैं। हम समाज के इन नियमों में भी संशोधन करेंगे और सेक्स को शुद्ध पारिवारिक विषय घोषित कर देंगे। सेक्स के मामले में सरकार तो कोई कानून बनाएगी ही नहीं। सरकार सिर्फ बल प्रयोग रोक सकती है, अन्य किसी मामले में दखल नहीं देगी, लेकिन सेक्स के मामले में समाज भी विशेष परिस्थिति में ही दखल देगा, अन्यथा सेक्स को पारिवारिक विषय मानकर परिवार को निर्णय करने की स्वतंत्रता होगी। मैं आपको फिर से स्पष्ट कर दूं कि हम सेक्स के मामले को अति संवेदनशील विषय न मानकर एक सामान्य विषय बनाने का प्रयास करेंगे। नई समाज व्यवस्था में हम सेक्स को अति संवेदनशील विषयों से निकालकर सामान्य श्रेणी का विषय बना देंगे। सरकार इस मामले में किसी प्रकार का कोई कानून नहीं बना सकेगी, समाज भी सेक्स के मामले में अधिक हस्तक्षेप नहीं कर सकेगा। सेक्स को परिवारों का आंतरिक मामला बना दिया जाएगा। मेरे विचार से वर्तमान समय में जो सामाजिक बदलाव हुआ है, उस आधार पर सेक्स के मामलों में भी कुछ नए सिद्धांत बनाने की जरूरत है। अतृप्त महिलाएं यदि मंदिरों या आश्रमों में जाकर अनैतिक संबंध बनाती हैं, तो उन्हें पारिवारिक विषय मानकर अनदेखा किया जाएगा। इसी तरह वर्तमान समय में परिवार में देवर-भाभी के जो रिश्ते हैं, उन्हें अति पवित्र रिश्ता से निकालकर पारिवारिक रिश्ता बना दिया जाएगा। अर्थात वर्तमान समय में भाभी को मां के समान मानने की प्रथा है, इसमें बदलाव किया जाएगा। भाभी परिस्थिति अनुसार मां भी हो सकती है और परिस्थिति अनुसार पत्नी की भी भूमिका निभा सकती है। इस तरह हम यह प्रयत्न करेंगे कि वर्तमान समय में जो सेक्स के मामले में मांग और पूर्ति के बीच बहुत अंतर आ गया है और उसके परिणाम स्वरूप बलात्कार बढ़ रहे हैं, इस अंतर को कम करने का प्रयास किया जाएगा। मांग को कम करने की कोशिश की जाएगी और पूर्ति को अधिक बढ़ाया जाएगा। इस तरह हम सेक्स संबंधी अपराधों को कम करने का प्रयास करेंगे और इसके लिए सामाजिक व्यवस्था में बदलाव करेंगे। स्पष्ट है कि सेक्स के संबंध में उच्च वर्ग के द्वारा बनाए गए उच्च सिद्धांतवादी नियमों को शिथिल करके उन्हें अधिक व्यावहारिक बनाया जाएगा। सेक्स की भूमिका में जो हत्याएं और बलात्कार लगातार बढ़ते जा रहे हैं, इस समस्या को गंभीर मानकर इसके समाधान पर हम सब विचार जरूर करें। वर्तमान बदली हुई परिस्थितियों में सेक्स में जो मांग और पूर्ति के बीच में अंतर आया है, इस अंतर को कम करने के लिए हमें कुछ सामाजिक मान्यताओं में बदलाव करना पड़ेगा। मेरी इस बात का आमतौर पर समर्थन नहीं किया गया। मैं जानता था कि वर्तमान समय में संस्कारित लोग इस बात का समर्थन नहीं कर सकते, लेकिन मेरे सामने भी एक मजबूरी है कि मैं प्रतिदिन देश में सैकड़ों सेक्स के मामले में होते हुए बलात्कार, हत्याएं, मुकदमेबाजी या तलाक की घटनाओं पर आंख बंद करके नहीं रह सकता। यह घटनाएं लगातार बढ़ रही हैं और इनका समाधान आवश्यक है। आप किसी भी दिन का अखबार उठा कर देख लीजिए, तो आपको इस प्रकार की हत्याएं या बलात्कार बढ़ते हुए ही दिखाई देंगे। कौन सोचेगा इसका समाधान? उच्च आदर्श आपको संतुष्ट कर सकते हैं, समाधान नहीं दे सकते। इसलिए मैंने यह खतरा उठाया है कि हम फिर से इस समस्या के समाधान पर विचार करें कि सेक्स की बढ़ती हुई मांग और पूर्ति के बीच के अंतर को पाटने के लिए हम अपनी सामाजिक व्यवस्था में क्या बदलाव कर सकते हैं। यदि सिद्धांत अव्यावहारिक होंगे, तो समाज में अराजकता बढ़ेगी ही। ऐसी स्थिति में सिद्धांतों में संशोधन करना ही बुद्धिमानी होती है और इस प्रकार का खतरा कोई सामान्य व्यक्ति नहीं उठा सकता, इसलिए मैंने यह हिम्मत की है।

यह विषय अति संवेदनशील है, सार्वजनिक चर्चा नहीं हो सकती, लेकिन समस्या बहुत गंभीर है और इसलिए इस विषय पर चर्चा आवश्यक है। वर्तमान समय में सेक्स के संबंध में कोई नए नियम बनाना संभव नहीं है और इस प्रकार के मामलों में सार्वजनिक चर्चा भी नहीं हो सकती, लेकिन हम, आप जो मार्गदर्शक हैं, इस प्रकार के लोगों को आपस में बैठकर इस विषय पर चर्चा करनी चाहिए। वर्तमान समय में सेक्स के मामलों में सबसे ज्यादा गलती संघ से हो रही है। संघ ने सेक्स को अति संवेदनशील विषय बना दिया है। संघ अपने आंतरिक मामलों में ऐसा करें, यह तो बिल्कुल ठीक है, लेकिन संघ इसे सामाजिक विषय बना दे, यह उचित नहीं है। सेक्स के मामले में व्यक्तिगत स्वतंत्रता और पारिवारिक सीमाओं तक ही इसे रहने देना चाहिए। इसे सामाजिक चर्चा का विषय बनाना ठीक नहीं है और राज्य को तो इस मामले से पूरी तरह बाहर कर देना चाहिए। अनेक धर्मगुरु इस प्रकार के मामलों पर अनावश्यक चर्चा करते हैं। अभी सरकार ने धारा 370 हटाई, लिव-इन रिलेशनशिप की छूट दी। इस प्रकार के कदमों का विरोध नहीं होना चाहिए। उथले धर्मगुरु इन सब का विरोध करते हैं। संघ का सावरकरवादी ग्रुप इन दोनों का विरोध करता है, जबकि सरकार ने कानून बनाया नहीं है, हटाया है। सरकार अगर इस प्रकार के कानून हटाती जाए, तो हमें समर्थन करना चाहिए। मेरा अपने साथियों से यह निवेदन है कि हम आपसी चर्चा में सेक्स के उच्च आदर्शों को ढाल न बनाएं। अपने को उच्च चरित्रवान सिद्ध करने के लिए अन्य लोगों पर अनावश्यक लांछन लगाना बुरी आदत है। इस प्रकार की बुरी आदत से बचना चाहिए। सावरकरवादी ने जिस तरह गांधी, नेहरू, इंदिरा या अन्य लोगों की आलोचना के लिए सेक्स का सहारा लिया, यह उचित नहीं है। इसलिए मेरा यह सुझाव है कि हम सरकार के द्वारा इस संबंध में बनाए गए कानून को हटाने का प्रयास करें। नैतिकता के उच्च मापदंड संस्कार द्वारा समाज को दिए जा सकते हैं, कानून के द्वारा नहीं। यह सिद्धांत बनाने की जरूरत है। नई समाज व्यवस्था में हम सेक्स को मौलिक अधिकार मानते हैं। सेक्स की पूर्ति में राज्य या समाज को किसी भी प्रकार से बाधा नहीं पैदा करनी चाहिए, क्योंकि सेक्स एक मौलिक अधिकार है और प्राकृतिक भूख है। हम सेक्स को संस्कारों द्वारा अनुशासित कर सकते हैं, इस कार्य में धर्म बहुत महत्वपूर्ण होता है, लेकिन सेक्स को किसी भी रूप में बलपूर्वक नहीं दबाया जा सकता। इसलिए सहमत सेक्स में आने वाली बाधाओं को दूर करने का कार्य समाज का था। दुर्भाग्य से सहमत सेक्स में बाधाएं पैदा करने में राज्य बहुत आगे आया। राज्य ने सेक्स में बाधाएं पैदा की और नासमझ धर्मगुरुओं ने इस संबंध में राज्य की मदद की। परिणाम हुआ कि सेक्स असंतुलित हो गया और इस असंतुलन का परिणाम हुआ अनेक प्रकार के अपराध। अब आवश्यकता इस बात की है कि धर्म सेक्स के मामले में अपने विचारों में थोड़ा संशोधन

करें और समाज इस बात की व्यवस्था करें कि सहमत सेक्स में किसी भी प्रकार की कोई बाधा न हो। धर्म और समाज दोनों को सबसे पहले राज्य को इस मामले से बाहर करना होगा। राज्य को किसी भी रूप में सेक्स के मामले में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, क्योंकि राज्य इस मामले को बहुत अधिक असंतुलित कर रहा है। जिस तरह राज्य विवाह की उम्र बढ़ा रहा है, वेश्यालाय रोक रहा है, सेक्स के अप्राकृतिक माध्यमों को भी प्रतिबंधित कर रहा है, अन्य भी अनेक प्रकार के नए-नए कानून बना रहा है, यह कानून ही समाज में लगातार असंतुलन बढ़ा रहे हैं। राज्य को यह बात स्वीकार करनी चाहिए कि सेक्स एक मौलिक अधिकार है। सेक्स को सिर्फ अनुशासित किया जा सकता है, नियंत्रित नहीं। नई समाज व्यवस्था में हम इस बात का ध्यान रखेंगे कि यह असंतुलन पूरी तरह दूर हो जाए। समाज इस बात की चिंता करें कि सेक्स एक प्राकृतिक भूख है और सहमत सेक्स को किसी भी परिस्थिति में किसी भी तरीके से न रोका जा सकता है, न बाधा पैदा की जा सकती है। इसके लिए हम आप सब मिलकर अपने धर्मगुरुओं को इस बात के लिए सहमत करें कि वह किसी भी आधार पर इस मामले में राज्य की मदद न करें।

भारत सरकार की उपलब्धियां

लगभग 6 महीने पहले तक भारत का हर विपक्षी नेता मणिपुर मणिपुर चिल्लाता रहता था। यहां तक कि मणिपुर के नाम पर संसद भी कई सप्ताह तक ठप कर दी जाती थी। उसे भारत में सिर्फ मणिपुर ही अशांत दिखता था, उसे कभी बंगाल नहीं दिखता था, उसे कभी कश्मीर नहीं दिखता था। राहुल गांधी भी हर चार-छह महीने में मणिपुर का दौरा करते थे और राहुल गांधी यह बात भी हमेशा बोलते थे कि प्रधानमंत्री को मणिपुर जाना चाहिए। मैं अभी तक नहीं समझ सका कि राहुल गांधी इतनी बार मणिपुर गए और उन्होंने क्या कर लिया, और प्रधानमंत्री मणिपुर में कभी नहीं गए और मणिपुर शांत हो गया। यह आश्चर्यजनक है कि मणिपुर को राहुल गांधी अशांत नहीं कर सके क्योंकि शांति या अशांति बार-बार जाने से नहीं होती है। शांति और अशांति के लिए बुद्धि की जरूरत पड़ती है, योजना की जरूरत पड़ती है। राहुल गांधी के पास प्लानिंग नहीं है। नरेंद्र मोदी ने दिल्ली में बैठे-बैठे प्लानिंग की, मणिपुर शांत हो गया। मणिपुर को ईसाइयों और हिंदुओं के बीच बांटने की सारी कोशिश असफल हो गई और अब भारत के विपक्षी नेता मणिपुर का नाम लेने से बच रहे हैं। मेरे विचार से देश में इस प्रकार क्षेत्रवाद को बढ़ाकर यदि विपक्ष अपनी राजनीति मजबूत करना चाहता है, तो उसका मार्ग गलत है।

हिन्दू-मुसलमान

पिछले एक सप्ताह से भारत एक सावधान स्थिति में गुजर रहा है। पाकिस्तान के साथ निरंतर टकराव बना हुआ है जो अभी तक जारी है। ऐसे समय में भारत के मुसलमानों ने जैसा राष्ट्रवादी रुख अपनाया, वह वास्तव में प्रशंसनीय है। स्वतंत्रता के बाद पहली बार भारत के मुसलमानों का कितना अच्छा राष्ट्र प्रेम दिखा, जो मुझे इससे पहले कभी देखने को नहीं मिला। इसका कारण क्या था, वह तो अभी बाद में समझ में आएगा, क्योंकि यह भी हो सकता है कि उनका कोई हृदय परिवर्तन हुआ हो, अथवा किसी रणनीति के अंतर्गत उनमें बदलाव आया हो, या पूरे दुनिया में मुसलमानों की होने वाली बदनामी से उनके अंदर कुछ परिवर्तन की उम्मीद दिखाई हो। यह भी हो सकता है कि विपक्षी दलों का रुख देखते हुए भारत के मुसलमानों ने वर्तमान समय में यह भूमिका ठीक समझी हो। कारण चाहे जो भी हो, लेकिन भारत के लोगों के लिए भारत के मुसलमानों के इस अप्रत्याशित बदलाव का स्वागत करना चाहिए। मैं इस बात से सहमत हूं कि अभी और सावधान रहने की जरूरत है, लेकिन सावधानी का अर्थ संदेह नहीं होता है, बल्कि सावधानी का अर्थ सतर्कता होता है। मैं भारत के मुसलमानों से यह निवेदन करता हूं कि इस बदलाव को लंबे समय तक सार्थक बनाए रखें, क्योंकि उन्हें यह बात अच्छी तरह जानकारी भी है कि उन्हें भारत में ही रहना है और दुनिया के किसी अन्य देश में उन्हें उस तरह का सम्मान नहीं मिल सकेगा, जैसा उन्हें भारत में मिल रहा है। मैं अपने कुछ कट्टरपंथी हिंदुओं से भी निवेदन करता हूं कि वे मुसलमानों के इस प्रकार के बदलाव का सतर्कता पूर्वक स्वागत करें।

हम हिंदू-मुसलमान के संबंधों पर गंभीर चर्चा कर रहे हैं। भारत में मुसलमानों की संख्या लगभग 24 करोड़ है। दुनिया में सबसे ज्यादा मुसलमान भारत में हैं, इसलिए हमें हिंदू-मुसलमान संबंधों पर गंभीरता से विचार करना चाहिए। मैं अपने अनुभव से इस बात को समझता हूं कि आमतौर पर मुसलमानों में दो-तीन ऐसी गंभीर बुराइयां हैं, जिनके कारण उनके साथ तालमेल करना बहुत कठिन है। पहले तो उनके अंदर गंदगी है, अर्थात थूक कर धोखा देना। इसका आज तक कोई स्पष्टीकरण भारत का कोई मुसलमान नहीं दे सका। वह इस प्रकार की घटनाओं की खुलकर निंदा भी नहीं करता है। दूसरी जो गलती है, वह यह है कि मुसलमान जन्म से ही उग्रवादी होता है। यदि भारत की पूरी आबादी का हम आकलन करें, तो मुसलमानों में दो-चार प्रतिशत आतंकवादी होते हैं, 90% उग्रवादी होते हैं, और दो-चार प्रतिशत ही शांतिप्रिय होते हैं, जबकि हिंदुओं में इसका ठीक उल्टा है। हिंदुओं में आतंकवादियों की संख्या बहुत ही नगण्य है, अपवाद स्वरूप ही होते हैं। उग्रवादियों की संख्या भी 10-20 प्रतिशत से अधिक नहीं है। 80% लोग तो ऐसे हैं, जिन्हें आप शांतिप्रिय भी कह सकते हैं, कायर भी कह सकते हैं। तीसरी बात, मुसलमानों में एक यह बुराई है कि मुसलमान महिला - पुरुष संबंधों में

"...यदि सभी मुसलमान आतंकवादी हैं, तो आतंकवाद का विरोध करने में सारे मुसलमान अपने आप शामिल हो जाएंगे। हमें हिंदू और मुसलमान का विभाजन करने की कोई जरूरत नहीं है।..."

अपने परिवार तक अधिक सीमित रहना चाहता है। यह एक गंदगी है, क्योंकि दुनिया भर में यह सिद्ध हो चुका है कि ब्लड रिलेशन में महिला-पुरुष का संबंध पूरी तरह असांस्कृतिक है, लेकिन मुसलमान इस बुराई को उतना गंभीर नहीं मानता, जितना हिंदू मानता है। आज आप भारत में देख सकते हैं कि हिंदुओं में आमतौर पर खून के रिश्ते की तो बात ही अलग है, गोत्र तक में विवाह नहीं करते। यहां तक कि परिवार की लड़की को, भले ही वह मुसलमान के यहां चली जाए, लेकिन परिवार में उपयोग नहीं कर सकते, क्योंकि इसे गंभीर गंदगी मानते हैं, जबकि मुसलमान ठीक उलटा सोचते हैं। भारत में जितने भी अंतर-धार्मिक विवाह हुए हैं, उनमें 90-95 प्रतिशत हिंदुओं की लड़कियां मुसलमान के यहां गई हैं। मुसलमान की लड़कियां शायद एक- दो प्रतिशत ही हिंदुओं के यहां आई होंगी। मैं इसे मुसलमानों में एक गंदगी मानता हूं। मेरा विचार है कि भारत के मुसलमान को इस बात पर गंभीरता से विचार करना चाहिए, खासकर वर्तमान समय में जब उन्हें गंभीरता से सोचने का अवसर मिला है।

मेरे कई मित्रों ने कहा कि हर आतंकवादी सिर्फ मुसलमान होता है, हिंदू होता ही नहीं। लेकिन मेरा अपना अनुभव यह बताता है कि क्या हम नक्सलवादियों को हिंदू नहीं मानते? क्या हम गोडसे को हिंदू नहीं कहते? क्या नक्सलवादी और गोडसे शांतिप्रिय हिंदू हैं? और यदि नहीं हैं, वे चाहे उग्रवादी हों या आतंकवादी हों, लेकिन शांतिप्रिय तो नहीं कहा जा सकता। इसलिए मेरा यह सुझाव है कि आतंकवाद का विरोध करें। यदि सभी मुसलमान आतंकवादी हैं, तो आतंकवाद का विरोध करने में सारे मुसलमान अपने आप शामिल हो जाएंगे। हमें हिंदू और मुसलमान का विभाजन करने की कोई जरूरत नहीं है। सच्चाई यह है कि उग्रवाद एक खतरनाक विचारधारा है। उग्रवादियों में ही कुछ अतिवादी हो जाते हैं, वे आतंकवादी हो जाते हैं। आतंकवादियों की कोई विचारधारा नहीं होती, इसलिए हमें उग्रवाद से बचना चाहिए, आतंकवाद का विरोध करना चाहिए। लेकिन यदि हमने उग्रवाद का समर्थन कर दिया, तो आतंकवाद हमें इस प्रकार नुकसान पहुंचाएगा, जिस तरह का नक्सलवादियों के नाम पर कम्युनिस्ट बदनाम हो रहे हैं। कुछ आतंकवादी मुसलमान के नाम पर सारे मुसलमान बदनाम हो रहे हैं। गोडसे के नाम पर लंबे समय तक सावरकरवाद बदनाम रहा। जिस तरह संघ ने सच्चाई को समझा और उग्रवादी विचारधारा से किनारा किया, इस तरह मुसलमानों को भी और साम्यवादियों को भी सच्चाई स्वीकार करनी चाहिए। उग्रवाद कभी भी आपको परेशानी में डाल सकता है।

भारत - पाकिस्तान

आज रात भारत ने पाकिस्तान में घुसकर वहां के 50 से अधिक आतंकवादियों को मार दिया, जिसमें मसूद अजहर के पूरे परिवार को खत्म कर दिया गया। मैं इस तरह की किसी कार्यवाही की उम्मीद तो कर रहा था, लेकिन मेरी उम्मीद से यह कार्यवाही कुछ ज्यादा हुई है। अगर मसूद अजहर का परिवार और कुछ अन्य लोगों को मिलाकर 26 आतंकवादी भी मारे जाते, तो बदला पूरा हो जाता क्योंकि उन लोगों ने भारत में चोरी से निर्दोष लोगों को मारा था और भारत ने खुलेआम चुनौती देकर सीमा पार करके आतंकवादियों को मारा है। फिर भी, अगर मरने वालों की संख्या 50 से भी ज्यादा हो गई है, तो यह और अधिक संतोष की बात है। दुनिया में यह बात प्रमाणित हो गई है कि मोदी है, तो सब कुछ मुमकिन है।

यह संघर्ष भारत-पाकिस्तान के बीच सीमित नहीं है, बल्कि दो संस्कृतियों के बीच टकराव है, जिसमें एक संस्कृति आतंकवाद के सहारे अपने संख्या विस्तार की है और दूसरी संस्कृति इस आक्रमण से सुरक्षा की है। पिछले 5-10 वर्षों में ही मुस्लिम संस्कृति इस मोड़ तक आ गई है, यह मुसलमान के लिए चिंता का विषय है। मैं अच्छी तरह समझता हूं कि आतंकवादियों की संस्कृति को या तो भारत निपट सकता है या इसराइल निपट सकता है। अन्य देशों में इस तरह की योग्यता नहीं है। आज एक तरफ इसराइल मार रहा है और पूरी दुनिया की मुस्लिम संस्कृति का मनोबल टूटा हुआ है, दूसरी ओर भारत भी अपनी तरफ से इसी तरह कर रहा है और आज पूरी दुनिया की मुस्लिम संस्कृति का मनोबल गिरा हुआ है क्योंकि दुनिया के कोई भी मुसलमान देश चाहते हुए भी पाकिस्तान के समर्थन में खड़े होने की हिम्मत नहीं कर पा रहे हैं। अब तो यह स्थिति बनती जा रही है कि अब इस संस्कृति को दुनिया की कोई भी ताकत कभी भी लतिया सकती है और यह संस्कृति अप्रत्यक्ष रूप से लतखोर के सरीखे सिद्ध होती जा रही है। मेरा फिर से निवेदन है कि मुस्लिम संस्कृति इस विषय पर गंभीरता से विचार करें, अन्यथा कोई भी एरा गैरा नत्थू खैरा इस बदनाम संस्कृति पर किसी भी तरह का आक्रमण कर देगा और कोई दुनिया में उनकी सुनने के लिए तैयार नहीं होगा।

पहली बार भारत सरकार ने आतंकवाद की जड़ पर प्रहार किया है। इसके पहले आतंकवादियों पर प्रहार करने को ही आतंकवाद पर आक्रमण माना जाता था, लेकिन भारत सरकार ने सूझबूझ दिखाते हुए यह महसूस किया कि आतंकवादी तो सिर्फ पतंग हैं, वास्तव में डोर जिनके हाथ में है, उन पर यदि आक्रमण नहीं होगा, इन पतंग पर आक्रमण करने से आतंकवाद खत्म नहीं होने वाला है। इसलिए भारत सरकार ने पहलगाम में जिन लोगों ने आक्रमण किया, उन लोगों को खोज कर मारने में उतनी ताकत नहीं लगाई, जितनी ताकत उन लोगों के खिलाफ लगाई जो इन पहलगाम के आतंकवादियों को संचालित कर रहे थे। इनकी जड़ में पाकिस्तान में बैठे हुए कुछ प्रमुख संचालक थे और उन संचालकों को पाकिस्तान सरकार का समर्थन प्राप्त हुआ। इसलिए भारत सरकार ने पहले तो उन संचालकों पर आक्रमण किया, लेकिन दूसरे दिन ही भारत सरकार ने पाकिस्तान सरकार को भी सबक सिखाना जरूरी समझा। मेरे विचार से अब समय आ गया है कि आतंकवाद को समाप्त करने के लिए आतंकवादी को प्रायोजित करने वाले व्यक्तियों, संस्थाओं या सरकारों को भयभीत करना पड़ेगा। भारत सरकार के इस कदम पर दुनिया गंभीरता से सोच रही है और मैं तो इसका बहुत पुराने समय से प्रशंसक हूं कि आतंकवाद को रोकने के लिए आतंकवादी नहीं, बल्कि आतंकवादियों के प्रायोजक ज्यादा जिम्मेदार हैं। भारत सरकार ने दुनिया को एक नया मार्ग दिखाया है। आश्चर्य है कि भारत सरकार के इस आश्चर्यजनक आक्रमण में एक ऐसा आतंकवादी भी मर गया है, जिसे अमेरिका लंबे समय से खोज रहा था और वह पाकिस्तान में छिपा हुआ था।

भारत कभी भी युद्ध उन्मादी देश नहीं रहा। भारत लंबे समय से शांतिप्रिय देश रहा है। भारत अपनी सुरक्षा करना जानता है, आक्रमण करना नहीं। यह बात कल भारत सरकार ने युद्ध विराम स्वीकार करके प्रमाणित किया है कि भारत युद्ध उन्मादी नहीं है। वैसे तो मेरे विचार से पहलगाम की घटना के बदले में सरकार ने जो 8 तारीख तक किया था, वही पर्याप्त था। उसके बाद आगे बढ़ाने की कोई जरूरत नहीं थी, लेकिन सरकार ने चाहे जो भी सोच कर किया हो, जो उसके बाद दो-तीन दिनों तक इस युद्ध को आगे बढ़ाया, वह भूल सरकार को समझ में आ गई और सरकार ने सोच-समझकर अपने कदम पीछे खींच लिए। मेरे विचार से भारत सरकार ने जो निर्णय किया है, वह बहुत अच्छा है, सम्मानजनक है और शांति प्रियता का संदेश देता है। सरकार के इस निर्णय से सारी दुनिया में हिंदुत्व के प्रति विश्वास बढ़ा है कि हिंदू सुरक्षा करना जानता है, कभी आक्रामक नहीं हो सकता। हिंदू कभी इस्लाम का अनुकरण नहीं कर सकता। जो भी भारत में युद्ध उन्मादी लोग थे, उनका उत्साह जरूर कुछ ठंडा हुआ है, उन्हें बुरा लगा है क्योंकि इस प्रकार के लोग पिछले तीन-चार दिनों में बढ़-चढ़कर आगे आ गए थे और उन्होंने यह उम्मीद जगाई थी कि अब तो वह सरकार को युद्ध करने की दिशा में धकेल देंगे, लेकिन सरकार ने सूझबूझ से काम लिया और युद्ध प्रिय लोगों के युद्ध उन्माद से दुनिया को बचा लिया। मैं वर्तमान सरकार को इस बात के लिए बधाई देता हूं कि भारत सरकार आज भी इस नीति पर कायम है। युद्ध शांति के लिए किया जाता है, युद्ध के लिए शांति का बलिदान नहीं किया जा सकता। मैं भारत सरकार के इस निर्णय की प्रशंसा करता हूं। अब हमारा देश गांधी के मार्ग पर ही चलेगा। भारत दुनिया को आश्वस्त करता है कि हम आवश्यकता से एक दिन भी अधिक युद्ध नहीं करेंगे।

भारत और पाकिस्तान 75 वर्षों से आपस में लड़ रहे हैं और अभी आगे भी कई वर्षों तक लड़ते रहेंगे क्योंकि न भारत में सच बोलने की हिम्मत है, न पाकिस्तान में सच बोलने की हिम्मत है। भारत और पाकिस्तान दोनों जगह लोकतंत्र है और लोकतंत्र में लोकहित की अपेक्षा लोकप्रियता पर अधिक ध्यान दिया जाता है। भारत और पाकिस्तान दोनों जानते हैं कि इस समस्या का अंतिम समाधान क्या होगा। सारी दुनिया भी इस समस्या का समाधान जानती है, लेकिन किसी में इस समस्या का समाधान खुलकर बोलने की हिम्मत नहीं है। भारत का भी हर नागरिक इस समस्या का समाधान जानता है, लेकिन बोल नहीं सकता क्योंकि सच की तुलना में राष्ट्र प्रेम ज्यादा हावी हो गया है। इस बात को भारत और पाकिस्तान दोनों अच्छी तरह जानते हैं कि अंत में यथा स्थिति को ही स्वीकार करना पड़ेगा, लेकिन न भारत में इतनी हिम्मत है, न पाकिस्तान में इतनी हिम्मत है क्योंकि यदि यह बात भारत खुलकर बोल दे, तो भारत के सारे राष्ट्र प्रेमी उस सरकार को मिनट में उलट देंगे और यदि पाकिस्तान इस बात को बोल दे, तो पाकिस्तान के उग्रवादी पाकिस्तान के प्रधानमंत्री की भी हत्या कर देंगे। भारत और पाकिस्तान में उग्र राष्ट्रवाद और इस प्रकार की अतिवादी धारणाएं सत्य को स्वीकार करने से भयभीत करती हैं और उसी का परिणाम है कि हम 70 वर्षों से भले ही अपने खेतों में दिन-रात मेहनत करते हैं, भले ही हम हर जगह पर्यावरण की चिंता करते हैं, भले ही हम कार्यालय में 8 घंटे की जगह 10 घंटे मेहनत कर लें, लेकिन सारा कमाया हुआ अंत में इस कश्मीर समस्या की लड़ाइयों में बर्बाद करना ही हमारी नियति बन गई है। मुझे उस समय बहुत प्रसन्नता हुई थी जब अटल बिहारी वाजपेई और पाकिस्तान के राष्ट्रपति मिलकर इस समस्या के यथार्थ को समझ गए थे और आडवाणी जी ने आकर रोक दिया था, अन्यथा इस लड़ाई का समझौता हो गया होता। मैं यह भी जानता हूं कि यदि उस समय समझौता हो जाता, अटल जी की सरकार तुरंत गिरा दी जाती, लेकिन हमें अब इस लड़ाई से मुक्ति पाने की जरूरत है। भारत और पाकिस्तान को मिलकर इस समस्या का उचित समाधान खोजना चाहिए, भले ही अगर यथा स्थिति स्वीकार करनी पड़े, तो हिम्मत करके स्वीकार करना चाहिए क्योंकि उग्रवादियों को संतुष्ट रखने के लिए हम दिन-रात अपने खेतों में काम करने के लिए तैयार नहीं हैं।

युद्ध विराम के संबंध में अब कई बातें धीरे-धीरे साफ होती जा रही हैं। सारी दुनिया के बड़े देश इस भारत-पाकिस्तान की लड़ाई को रोकने में सक्रिय थे। पिछले एक-दो दिनों से चीन, अमेरिका, रूस, ईरान, सऊदी अरब जैसे कई बड़े देश भारत और पाकिस्तान को युद्ध विराम के लिए तैयार कर रहे थे। पाकिस्तान तो युद्ध विराम के लिए सहमत था ही, लेकिन भारत आना-कानी कर रहा था। भारत ने अपनी सेना को खुली छूट दे रखी थी, इसलिए भारत ने कई देशों को यह बात बताई होगी कि पाकिस्तान हमारे भारतीय सेना प्रमुख से बात करें। कल 3:30 बजे पाकिस्तान के सेना प्रमुख ने भारतीय सेना प्रमुख से बात की और दोनों के बीच सहमति बन गई। यह बात पाकिस्तान ने तुरंत अमेरिका, चीन तथा अन्य देशों को बता दी कि हमारे बीच इस प्रकार की बात हुई है। भारतीय सेना ने इसकी घोषणा करने के लिए शाम 5:00 बजे का समय तय किया और 5:00 बजे प्रेस कांफ्रेंस बुलाई, लेकिन अमेरिका के राष्ट्रपति को ऐसा लगा कि कहीं यह बात सबसे पहले चीन न उजागर कर दे और इसका श्रेय ले ले। इससे अच्छा है कि मैं चीन से पहले ही इस बात को घोषित कर दूं। अमेरिका के राष्ट्रपति ने इस मामले में बाजी मार ली और चीन पिछड़ गया। सच बात यह है कि इससे भारत-पाकिस्तान का कोई संबंध नहीं था; युद्ध विराम 5:00 बजे घोषित होने ही वाला था। यह अमेरिका और चीन का मामला है। यह बात जगजाहिर है कि भारत सरकार चीन की अपेक्षा अमेरिका से अधिक निकट है और भारत का विपक्ष अमेरिका की तुलना में चीन के अधिक निकट है, और इसलिए भारत के विपक्ष को यह बात बुरी लग रही है कि इस मामले में अमेरिका आगे कैसे निकल गया। यदि यही युद्ध विराम चीन पहले घोषित कर देता, तो भारत के विपक्ष को कोई दिक्कत नहीं होती।

भारत में कुछ ऐसे भी नासमझ मौजूद हैं जो बार-बार कह रहे हैं कि हमें पीओके को भारत में मिला लेना चाहिए। मैं इस प्रकार की किसी भी मांग से सहमत नहीं हूं। पहली बात तो यह है कि वर्तमान समय में भारत को अपनी अर्थव्यवस्था मजबूत करनी चाहिए। हमारी अर्थव्यवस्था मजबूत होगी और सामरिक शक्ति भी मजबूत होगी, तो पाकिस्तान के लोग अपने आप इस तरह भारत की ओर झुक जाएंगे, जिस तरह वर्तमान समय में भारत के अनेक लोग जान देकर भी अमेरिका जाना चाहते हैं। अगर हमारी जीवनशैली मजबूत हुई, हम शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य अर्थव्यवस्थाओं में मजबूत हुए, और हम सामरिक दृष्टि से भी मजबूत हुए, तो पाकिस्तान जैसे अनेक टुकड़े भारत में मिलना चाहेंगे। दूसरी बात यह भी है कि जब तक हम भारत के मुसलमान में शांति का विश्वास नहीं दिला पाते हैं, तब तक कश्मीर के उस टुकड़े को भारत में मिलाकर हमें और नई समस्या पैदा नहीं करनी चाहिए। पहली बार अभी कश्मीर और शेष भारत के मुसलमान ने राष्ट्रवाद का परिचय दिया है। अभी अन्य और अवसर आने दें, अभी हम देखें कि भारत के मुसलमान में कितना बदलाव आया है। अभी पाकिस्तान के उस टुकड़े को भारत में मिला लेना बहुत बचकानी आवाज है। यह आवश्यक है कि भारत दबाव बनाए रखे। तीसरी बात यह है कि भारत में मिलने की एक छोटी आवाज पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से उठनी चाहिए, भारत से नहीं। जब यह आवाज पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से उठेगी, तो उसे भारत में मिला लेना सुविधाजनक होगा। इसलिए मेरा आपसे निवेदन है कि वर्तमान समय में युद्ध की भाषा छोड़ दीजिए। वर्तमान समय में पीओके को भारत में मिलाने की बात बंद कर दीजिए। सरकार पर भरोसा कीजिए, सरकार जैसा उचित समझेगी, इस संबंध में कदम उठाएगी। मैं रात भर सारा काम छोड़कर मच्छर मारने की अपेक्षा मच्छरदानी लगाकर आराम से सोना पसंद करता हूं। मैं किसी भी प्रकार के युद्ध के खिलाफ हूं।

"...सारी दुनिया में हिंदुत्व के प्रति विश्वास बढ़ा है कि हिंदू सुरक्षा करना जानता है, कभी आक्रामक नहीं हो सकता। हिंदू कभी इस्लाम का अनुकरण नहीं कर सकता। जो भी भारत में युद्ध उन्मादी लोग थे, उनका उत्साह जरूर कुछ ठंडा हुआ है,..."

पिछले 5 दिनों में हमने बहुत तेजी से घटनाक्रम को बदलते हुए देखा। जिस दिन भारत ने आक्रमण किया, उस दिन यह बात साफ दिखाई दी कि मुसलमान पूरा विपक्ष सरकार के समर्थन में खड़ा था, भले ही युद्ध के समर्थन में चुप था। एकमात्र गांधीवादी ही युद्ध के विरोध में खड़े थे, सावरकरवादी बढ़-चढ़कर युद्ध का समर्थन कर रहे थे। सत्ता पक्ष तो युद्ध के समर्थन में था ही। चार दिनों बाद ही युद्ध विराम हुआ, तो सब की भाषा पलट गई। मुसलमान इस मामले में पूरी तरह चुप था, पूरा का पूरा विपक्ष सरकार के विरोध में उतर गया। सावरकरवादी भी इस युद्ध विराम के विरुद्ध खुलकर मैदान में आ गए। यहां तक कि गांधीवादी भी विपक्ष के साथ खुलकर युद्ध के समर्थन में खड़े थे। सत्ता पक्ष पूरी तरह युद्ध बंद होने के पक्ष में था। गांधीवादी, मुसलमान, सावरकरवादी—यह सब तो अपने-अपने स्वभाव के अनुसार अपनी-अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहे थे, लेकिन सत्ता पक्ष और विपक्ष इन दोनों की प्रतिक्रियाएं बिल्कुल अलग थीं। मैं ऐसा समझता हूं कि सत्ता पक्ष और विपक्ष के नाम पर देश में जो कुछ भी हो रहा है, वह बहुत घातक है। यह बात सही है कि 10 वर्ष पहले जब भारतीय जनता पार्टी विपक्ष में थी, तो उसने भी इसी प्रकार युद्ध के बाद हुए समझौते का खुलकर विरोध किया था, जिस तरह आज कांग्रेस पार्टी कर रही है। लेकिन न उस समय भारतीय जनता पार्टी किसी सिद्धांत पर थी, न वर्तमान में विपक्ष किसी सिद्धांत पर है। विपक्ष की एक अलग नीति बनी हुई है, सत्ता पक्ष की अलग नीति बनी हुई है, और देश का सत्ता पक्ष और विपक्ष के बीच में विभाजन पूरे देश के लिए लगातार घातक होता जा रहा है। धर्म के आधार पर देश का विभाजन जितना घातक था, उससे कई गुना अधिक सत्ता पक्ष और विपक्ष के बीच का विभाजन घातक बनता जा रहा है। समय आ गया है कि अब देश को सत्ता पक्ष और विपक्ष के रूप में नहीं, बल्कि एक निष्पक्ष राजनीतिक व्यवस्था के रूप में खड़ा होना चाहिए। हमें कोई राजनीतिक दल नहीं चाहिए, हमें कोई सत्तापक्ष और विपक्ष नहीं चाहिए। हमें चाहिए एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था, जहां हमारे चुने हुए जनप्रतिनिधि एक साथ बैठकर स्वतंत्रता पूर्वक बिना किसी गिरोहबंदी के अपनी बात रख सकें। अब समय आ गया है कि हम पश्चिम के इस गंदे लोकतंत्र से मुक्ति पाएं और भारत में दलविहीन लोकतंत्र को आगे बढ़ाने की शुरुआत करें, अन्यथा यह सत्ता पक्ष और विपक्ष सारे देश को बहुत नुकसान पहुंचाते रहेंगे।

मेरी अपनी बात

आप सब जानते हैं कि मैं किसी भी विषय पर गोल-मोल बात नहीं करता, बल्कि अपनी बात साफ-साफ रखता हूं। आज पाकिस्तान में घुसकर भारत की सेना ने जिस तरह आतंकवादी ठिकानों पर आक्रमण किया है, उससे यह बात साफ हो गई है कि हम राष्ट्रीय स्तर पर बहुत मजबूत स्थिति में हैं। नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में हमारा देश और राष्ट्र पूरी तरह सुरक्षित है, लेकिन हमारे धर्मगुरु अपना कर्तव्य पूरा नहीं कर पा रहे हैं। हमारे धर्मगुरु अपनी असफलता को छुपाने के लिए अथवा अपनी दुकानदारी को बढ़ाने के लिए हिंदू राष्ट्र की मांग करते हैं, वे हिंदू बोर्ड की मांग करते हैं, जबकि भारत को हिंदू राष्ट्र नहीं चाहिए, कोई हिंदू बोर्ड नहीं चाहिए। भारत को चाहिए हिंदू समाज, भारत को चाहिए एक सामाजिक बोर्ड। हमें हिंदू एकता की नहीं, बल्कि हमें हिंदू संस्कृति की एकता चाहिए। हम धर्म के आधार पर राष्ट्र की न कभी कल्पना की है, न करेंगे। हम धर्म के आधार पर समाज की कल्पना करते हैं। हम हिंदू संस्कृति के विस्तार के पक्षधर हैं, हिंदू राष्ट्र के नहीं। राष्ट्र नरेंद्र मोदी के हाथों सुरक्षित है। हम भारत के लोग मुस्लिम संस्कृति के विरुद्ध एकजुट होकर नरेंद्र मोदी को मजबूत करते रहेंगे, लेकिन हम किसी भी स्थिति में मुस्लिम संस्कृति से टकराव के लिए अपने हिंदू संस्कृति को कमजोर नहीं होने देंगे। अब हमें हिंदू समाज चाहिए, हमें हिंदू संस्कृति चाहिए, हमें हिंदू राष्ट्र नहीं चाहिए। सस्ती लोकप्रियता के लिए इस प्रकार का नारा लगाने वाले धर्मगुरुओं को भेज दीजिए राजनीति में, भेज दीजिए सेना और पुलिस में। हमें ऐसे धर्मगुरुओं की जरूरत नहीं है। हमारे धर्मगुरु के रूप में तो मोहन भागवत ही पर्याप्त हैं।

मैंने एक पोस्ट लिखी थी, जिसमें मैंने आतंकवाद की तुलना में कायरता को कम बुरा माना था। मेरे कई मित्रों को यह बात अच्छी नहीं लगी। अनेक तथाकथित धर्मगुरुओं ने भी इससे असहमति व्यक्त की। मैं इस बात को और साफ कर देना चाहता हूं। मैं जन्म से अग्रवाल हूं, प्रवृत्ति से मार्गदर्शक, अर्थात ब्राह्मण हूं। स्वभाव से सत्य और अहिंसा को महत्वपूर्ण मानता हूं। मैं मान्यता और व्यवहार में पूरी तरह हिंदुत्व का पक्षधर हूं। मैं गाय का पूजक हूं। इन सब बातों को देखते हुए मेरे मन में यह कभी इच्छा पैदा नहीं हुई कि मैं शक्ति का बदला शक्ति से लूं, क्योंकि मैं कभी शेर नहीं बनना चाहता। मुझे गाय बनने पर ही सुख और संतोष मिलता है। मैं मानता हूं कि कायरता की तुलना में अहिंसा अधिक महत्वपूर्ण होती है। मैं कायरता की तुलना में विशेष परिस्थिति आने पर हिंसा का माध्यम अपना सकता हूं, लेकिन किसी भी परिस्थिति में आतंकवाद का सहारा नहीं ले सकता और हिंसा की तुलना में अहिंसा को अधिक उपयोगी मानता हूं। मैं यह मानता हूं कि शस्त्र में जितनी ताकत है, शास्त्र में उससे अधिक शक्ति है। मैं शास्त्र का पुजारी हूं, शस्त्र का नहीं। वर्तमान भारत की परिस्थितियों में, जब नरेंद्र मोदी सरीखा शेर हमें सुरक्षा की गारंटी दे रहा है, तो ऐसी परिस्थितियों में मैं शेर बनने की इच्छा रखूं, यह मेरी मूर्खता मानी जाएगी। इसलिए मैंने यह कल लिखा कि मैं शेर बनने की अपेक्षा गाय बनना अधिक महत्वपूर्ण मानता हूं। मुझे वर्तमान सरकार पर पूरा भरोसा है और इसलिए मैने यह स्पष्ट किया कि मैं आतंकवाद की तुलना में कायरता को कम बुरा समझूंगा। मैं अपनी बात पर कायम हूं।

मैंने अपने पूरे जीवन काल में आतंकवाद का खुला विरोध किया, चाहे वह आतंकवाद मुसलमान की तरफ से हो या हिंदुओं की तरफ से। मैंने उग्रवाद को भी हमेशा निरुत्साहित करने की कोशिश की। मैं हर प्रकार की सांप्रदायिकता का विरोध किया, चाहे वह सांप्रदायिकता मुसलमान के द्वारा की जाती हो या हिंदुओं के द्वारा। हमारे प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप रामानुजगंज नगर में आतंकवाद और सांप्रदायिकता लगभग शून्य रहे। पिछले 60-70 वर्षों के इतिहास में रामानुजगंज नगर में कभी कोई ऐसी घटना नहीं हुई, जिस घटना के कारण किसी भी प्रकार का उग्रवाद, आतंकवाद अथवा सांप्रदायिक टकराव बढ़े। लेकिन हमारा प्रयत्न सारे देश भर में लगातार जारी रहा। इन प्रयासों को देश के अनेक गांधीवादियों का भी समर्थन मिला और संघ के लोगों का भी समर्थन मिला। आज जब भारत में पाकिस्तान के साथ इतना बड़ा टकराव शुरू हो गया है, ऐसे समय में भारत के आम लोग सांप्रदायिकता को भूलकर एकजुट, एक स्वर में खड़े हो रहे हैं। यह मेरे लिए बहुत ही संतोष की बात है। आतंकवाद के खिलाफ सब लोगों की एकजुट आवाज आज हमारे पूरे समाज की आवश्यकता है। जिस तरह भारत आतंकवाद के खिलाफ और सांप्रदायिकता के खिलाफ एकजुट हुआ है, अगर यह एकजुटता लंबे समय तक कायम रही, तो हम सारी दुनिया को आतंकवाद और सांप्रदायिकता से मुक्त करने में आगे नेतृत्व कर सकते हैं। मुझे वर्तमान परिस्थितियों में देश की जनता पर पूरा विश्वास है और हम भविष्य में भी इस दिशा में आगे बढ़ते रहेंगे। मैं आपसे निवेदन करता हूं कि आप आतंकवाद और सांप्रदायिकता इन दोनों को खतरनाक समझें और इन दोनों से दूरी बनाकर रखें। दुनिया को आतंकवाद और सांप्रदायिकता से मुक्ति चाहिए, इस दिशा में हमारा भी अपना प्रयास जारी रहे।मैं बचपन से ही एक विचारक रहा। स्वतंत्र विचारक को आमतौर पर मार्गदर्शन या ब्राह्मण प्रवृत्ति का माना जाता है। मैंने जीवन भर सत्य और अहिंसा का मुख्य रूप से पालन किया। मैं किसी भी संगठन के साथ जुड़कर नहीं रहा, यद्यपि सभी संगठनों के अच्छे-बुरे का मैंने लगातार विश्लेषण किया। मैं राष्ट्रवाद और धर्मवाद से भी दूर रहा, क्योंकि कोई भी विचारक राष्ट्र और धर्म की सीमाओं से ऊपर होता है। इसके बाद भी मैं गुणों के आधार पर भारत और हिंदुत्व को सबसे अच्छा माना। संघ एक संगठन है और संघ के साथ मेरे संबंध जीवन भर परिस्थिति के आधार पर अच्छे-बुरे होते रहे। मैं बचपन से ही जनसंघ से जुड़ गया था और इस तरह संघ के साथ मेरे संबंध बहुत अच्छे रहे। मैं अटल बिहारी वाजपेई ग्रुप का माना जाता था, क्योंकि मैं लोहिया के विचारों से प्रभावित था। मैं संघ के 99% बातों से सहमत रहा, लेकिन एक बात मेरे और संघ के बीच में लगातार खटकती रही कि मैं शराफत को ही हिंदुत्व मानता था और संघ हिंदुत्व को ही शराफत मानता था। संघ सावरकरवादियों को बहुत अधिक महत्व देता था और मैं सावरकरवादियों को गलत मानता था। संघ पर प्रवीण तोगड़िया का बहुत अधिक प्रभाव था और मैं प्रवीण तोगड़िया को हमेशा गलत मानता था। 45 वर्ष पहले, जब मैं राजनीति के उच्च पदों पर था, तो मेरे सामने यह शर्त रखी गई कि आप हिंदुत्व को ही शराफत मानिए। मैंने राजनीति छोड़ दी, लेकिन अपनी बात पर अडिग रहा और आज तक अपनी बात पर कायम हूं। लेकिन 2017 के बाद धीरे-धीरे संघ ने अपनी परिभाषाएं बदली। संघ सावरकरवादियों से दूर होता गया और मैं संघ से नजदीक होता गया। संघ ने प्रवीण तोगड़िया को निकाल दिया और मैं संघ के साथ जुड़ गया। वर्तमान स्थिति में मैं यह महसूस करता हूं कि भारत की राजनीति में संघ ही एकमात्र ऐसा है जो समाज का प्रतिनिधित्व कर सकता है। नरेंद्र मोदी राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं और मोहन भागवत समाज का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। क्योंकि मोहन भागवत बिल्कुल ठीक दिशा में हैं और मैं एक विचारक के रूप में अपने को सफल बनाता हूं। मैं सावरकरवादियों से भी यह निवेदन करना चाहता हूं कि वे अपनी जिद छोड़ें, मोहन भागवत पर आंख बंद करके विश्वास करें। अब प्रवीण तोगड़िया और उनकी विचारधारा का भारत में और हिंदुत्व में कोई औचित्य और अस्तित्व नहीं है। शराफत ही हिंदुत्व है, इस विचारधारा पर पूरे समाज को आगे बढ़ना चाहिए।

हम हिंदू हैं, मुसलमान नहीं, जो हम आंख बंद करके किसी किताब को अंतिम सत्य मान लें। हम स्थिति अनुसार संशोधन करना जानते हैं और हम इस संबंध में खुलकर विचार भी कर सकते हैं। हमें पता है कि स्थिति अनुसार हमने खजुराहो को मंदिरों में स्थापित किया, हमने देवदासी प्रथा को भी स्वीकार किया और परिस्थिति अनुसार हमने भाभी को मां भी माना। हम स्थिति के अनुसार निर्णय करते हैं। यदि किसी सिद्धांत में कोई संशोधन की जरूरत होगी, तो हम विचार-विमर्श करने के लिए तैयार रहते हैं। मैं मानता हूं कि पिछले कुछ वर्ष पहले आबादी की बाढ़ को रोकने के लिए हमारी सरकारों ने कुछ ऐसे अव्यावहारिक नियम बनाए होंगे, जो उस समय की परिस्थितियों के अनुसार हो सकते हैं, लेकिन अब आबादी की समस्या खत्म हो गई है और अब नए सिरे से विचार करने की जरूरत है। हमें सेक्स के मामले में और महिला-पुरुष संबंधों में नई परिस्थितियों के आधार पर सोचना चाहिए, पुरानी रूढ़ियों के आधार पर नहीं।

भारत की प्रमुख समस्याएँ और राजनीति के दस नाटक

भारत में कुल ग्यारह प्रमुख समस्याएँ मानी जाती हैं–(1) चोरी, डकैती, लूट, (2) बलात्कार, (3) मिलावट कमतौल, (4) जालसाजी धोखा, (5) हिंसा, बल प्रयोग, आतंक, (6) चरित्र पतन, (7) भ्रष्टाचार, (8) सांप्रदायिकता, (9) जातीय कटुता, (10) आर्थिक असमानता, (11) श्रम-शोषण। ग्यारह समस्याओं में से प्रथम पाँच प्राकृतिक समस्याएँ हैं तो अन्य छः कृत्रिम। ग्यारह समस्याओं में से प्रत्येक समस्या व्यापक रूप से घातक है। प्राथमिकता का क्रम बनाना संभव नहीं है। सभी ग्यारह समस्याएँ स्वतंत्रता के बाद लगातार बढ़ रही हैं या बढ़ाई जा रही हैं।

दुनिया के सभी लोकतांत्रिक राजनेता सामाजिक एकता से भयभीत रहने के कारण फूट डालने को प्रमुख आधार मानते हैं। भारत भी एक लोकतांत्रिक देश होने के कारण इसी नीति पर चलता है। लोकतांत्रिक तरीके से यह उद्देश्य पूरा करने के लिए हर राजनेता दस प्रकार के नाटकों का सहारा लेता है–

(1) समाज को कभी एकजुट न होने देना। समाज में आठ आधारों पर वर्ग-निर्माण तथा वर्ग-विद्वेष फैलाकर वर्ग-संघर्ष की स्थिति निर्मित करना। ये आठ आधार हैं–धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, आर्थिक स्थिति और उत्पादक-उपभोक्ता।(2) समाज शब्द को कमजोर करके राष्ट्र शब्द और राष्ट्र भाव को मजबूत करना।

(3) समाज में वैचारिक बहस को पीछे करके भावनात्मक मुद्दों पर बहस जारी रखना।

(4) अधिक से अधिक कानून बनाना जिससे आम नागरिक अपराध भाव से ग्रसित रहें।

(5) आम नागरिकों को अक्षम, अयोग्य और अनपढ़ कहकर उनमें हीन भाव भरना।

(6) किसी समस्या का समाधान विपरीत तरीके से करना

(क) आर्थिक और सामाजिक समस्याओं का प्रशासनिक समाधान करना।

(ख) सामाजिक और प्रशासनिक समस्याओं का आर्थिक समाधान करना।

(ग) प्रशासनिक और आर्थिक समस्याओं का सामाजिक समाधान करना।

(7) समस्याओं का ऐसा समाधान करना कि उस समाधान से ही किसी नई समस्या का जन्म हो।

(8) बिल्लियों के बीच बंदर की ऐसी भूमिका बनाना कि

(क)बिल्लियों की रोटी कभी बराबर न हो,

(ख)बंदर हमेशा रोटियों को बराबर करता हुआ दिखे, किंतु करे नहीं।

छोटी रोटी वाली बिल्ली के मन में असंतोष की ज्वाला जलती रहे।(9) आर्थिक असमानता प्रजातांत्रिक तरीके से बढ़ती रहे इसके लिए–

(क) जो वस्तु गरीब लोग अधिक और अमीर लोग कम मात्रा में कार्य करें, उन पर अतिरिक्त कर लगाना और प्रत्यक्ष सब्सिडी देना।

(ख) जो वस्तु अमीर लोग अधिक और गरीब लोग कम मात्रा में प्रयोग करें, उन पर कर लगाना और अप्रत्यक्ष सब्सिडी देना।

(10) विपरीत प्राथमिकताएँ निर्धारित करना, वास्तविक समस्याओं को अंतिम तथा प्राथमिक एवं अस्तित्वहीन समस्याओं के समाधान को सर्वोच्च प्राथमिकता देना।

भारत में इस समय असंख्य नियम और कानून हैं। कानूनों के ढेर में आवश्यक कानूनों का भी महत्व समाप्त हो गया है।

पूरी दुनिया में समाज को गुलाम बनाए रखने के लिए राजनीति आठ आधारों का उपयोग करती है–

(1) संचालक और संचालित के बीच दूरी लगातार बढ़ती रहे।

(2) निष्कर्ष निकालने में विचार-मंथन के स्थान पर विचार प्रसार का अधिक प्रभाव हो।

(3) वैचारिक मुद्दों की जगह भावनात्मक मुद्दों पर बहस बढ़े।

(4) मानव स्वभाव में स्वार्थ वृद्धि होती रहे।

(5) मानव स्वभाव में ताप वृद्धि भी होती रहे।

(6) राजनीति और समाज सेवा का व्यावसायीकरण हो जाए।

(7) भौतिक पहचान कठिन हो जाए।

(8) समाज टूटकर वर्ग में बदल जाए।

भारत की प्रमुख समस्याएँ और समाधान

भारत में कुल समस्याएँ 5 प्रकार की दिखती हैं– (1) वास्तविक (2) कृत्रिम (3) प्राकृतिक (4) भूमंडलीय (5) भ्रम या असत्य।

1.वास्तविक समस्याएँ वे होती हैं जो अपराध भी होती हैं तथा समस्या भी। ये समस्याएँ 2 प्रकार की मानी जाती हैं–1. बलप्रयोग और 2. धोखाधड़ी। इन दोनों समस्याओं को ही हम पाँच भागों में देख सकते हैं–(1) चोरी, डकैती और लूट (2) बलात्कार (3) मिलावट और कमतौलना (4) जालसाजी धोखाधड़ी (5) बलप्रयोग, हिंसा, आतंकवाद। ये दोनों प्रकार की समस्याएँ भारत में स्वतंत्रता के बाद लगातार बढ़ रही हैं। सरकारें चाहे किसी की भी बनी हों, क्योंकि राज्य इन समस्याओं के समाधान में आवश्यकता से बहुत कम सक्रिय है।

2.कृत्रिम समस्याएँ मुख्य रूप से 6 प्रकार की मानी जाती हैं–(1) चरित्र पतन (2) भ्रष्टाचार (3) जातीय कटुता (4) साम्प्रदायिकता (5) आर्थिक असमानता वृद्धि (6) श्रम, बुद्धि और धन के बीच बढ़ती दूरी अर्थात श्रम शोषण। इन 6 समस्याओं के अतिरिक्त महिला उत्पीड़न, वन अपराध, असमानता, विदेशी कंपनियों का संकट, वैश्यावृत्ति, ब्लैक, तस्करी, जुआ, शराब, अफीम आदि भी ऐसी समस्याएँ हैं जो या तो कृत्रिम हैं अथवा राज्य ने अनावश्यक अपने हाथ में लेकर इनको बढ़ावा दिया है। ये समस्याएँ भी स्वतंत्रता के बाद लगातार बढ़ती गई हैं क्योंकि राज्य ने इन समस्याओं के समाधान में अनावश्यक अथवा आवश्यकता से अधिक सक्रियता दिखाई। अप्रत्यक्ष रूप से कहा जा सकता है कि ये समस्याएँ राज्य अपनी गलतियों को छिपाने के लिए योजनापूर्वक बढ़ाता है।

3.प्राकृतिक समस्याएँ–इसमें बाढ़, भूकंप, बीमारियाँ, तूफान, अनावृष्टि या अतिवृष्टि आदि शामिल हैं। ये समस्याएँ स्वतंत्रता के बाद कुछ घटी हैं।

4.भूमंडलीय समस्याएँ–इसमें पर्यावरण प्रदूषण, आबादी वृद्धि, जल संकट, मानव स्वभाव तापवृद्धि, मानव स्वभाव स्वार्थ वृद्धि, उग्रराष्ट्रवाद आदि शामिल हैं। ये समस्याएँ भी पूरे विश्व की तरह ही भारत में भी लगातार बढ़ रही हैं क्योंकि भारत में इनके समाधान के लिए कोई मौलिक चिंतन का अभाव है तथा भारत इन मामलों में दुनिया के अन्य देशों की अंधी नकल करता रहता है।

5.भ्रम या असत्य समस्याएँ–अनेक हैं जैसे महंगाई, शिक्षित बेरोजगारी, बढ़ती गरीबी, दहेज, मुद्रास्फीति का दुष्प्रभाव, अशिक्षा, बालश्रम, वैश्यावृत्ति, तस्करी, ब्लैकमेल आदि शामिल हैं। इनमें से कुछ समस्याएँ तो बिल्कुल ही अस्तित्वहीन हैं और उन्हें समाज में भ्रम फैलाने के लिए प्रचारित किया गया है। इन समस्याओं को राज्य इसलिए स्थापित करता है ताकि समाज का ध्यान वास्तविक समस्याओं से हटकर इन समस्याओं के समाधान में लग जाए।

वास्तविक समस्याओं का समाधान करना राज्य का दायित्व होता है और इसलिए प्राथमिकता का क्रम इस प्रकार होना चाहिए था कि पहली प्राथमिकता वास्तविक तथा उसी क्रम से चौथी प्राथमिकता भूमंडलीय समस्याओं के समाधान के लिए होनी चाहिए थी। भ्रमपूर्ण समस्याओं से तो राज्य को बिल्कुल विपरीत हो जाना चाहिए था, किंतु स्वतंत्रता के बाद लगातार देखा जा रहा है कि प्राथमिकताओं के क्रम में वास्तविक समस्याएँ पाँचवे नंबर पर हैं और भ्रमपूर्ण समस्याएँ पहले नंबर पर। विचित्र बात है कि जिन समस्याओं का कोई अस्तित्व ही नहीं है, ऐसी समस्याओं के समाधान का प्रयास लगातार क्यों हो रहा है? महंगाई नाम की कोई समस्या सम्पूर्ण भारत में न कभी थी, न है। किंतु पिछले 70 वर्षों से समाज में ऐसा असत्य प्रचार हुआ कि भारत का प्रत्येक नागरिक महंगाई के भ्रम से परेशान है। दहेज, सती प्रथा, शिक्षित बेरोजगारी, बढ़ती गरीबी जैसी समस्याएँ समाज में या तो हैं ही नहीं, या गलत परिभाषाओं के कारण आम लोगों को दिखती हैं, लेकिन राज्य इन समस्याओं के अस्तित्व को हमेशा स्वीकार भी करता है और समाधान का भी नाटक करता है।

पिछले ग्यारह वर्षों से नरेंद्र मोदी जी की सरकार बनी है। उसके पूर्व की सरकारें लगातार साम्यवाद के पूर्णतः या आंशिक प्रभाव में थी। साम्यवाद का प्रभाव सभी समस्याओं के विस्तार का जनक माना जाता है। पश्चिम की अंधी नकल भी समाधान में बाधक होती है। भारत ने या तो साम्यवाद की नकल की या पश्चिम की। ग्यारह वर्षों से नरेंद्र मोदी सरकार धीरे-धीरे भारतीय विचारधारा तथा पश्चिमी विचारधारा के बीच सामंजस्य स्थापित करके सुधार का प्रयास कर रही है। चोरी, डकैती, लूट, जालसाजी, भ्रष्टाचार, आर्थिक असमानता पर कुछ नियंत्रण हुआ है। नक्सलवाद अथवा कश्मीर का आतंकवाद धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है। किंतु बलात्कार, श्रम शोषण और मिलावट पर अभी कोई परिणाम नहीं दिखा है। इसी तरह साम्प्रदायिकता पर भी पर्याप्त सुधार हुआ है। मुस्लिम साम्प्रदायिकता तो रुकी ही है, किंतु संघ परिवार की साम्प्रदायिकता भी संकट के घेरे में आती जा रही है। जातिवाद, महिला उत्पीड़न जैसी कृत्रिम समस्याओं पर अभी काम नहीं हुआ है अथवा मोदी सरकार अभी इस पर कुछ समझ नहीं पा रही है।

सबसे बड़ी समस्या वर्ग निर्माण, वर्ग विद्वेष को बढ़ाकर वर्ग संघर्ष की दिशा में रही है। इसका वास्तविक समाधान तो वर्ग समन्वय से ही संभव था, किंतु इसके ठीक विपरीत पिछली सरकारों ने वर्ग समन्वय को कमजोर करके वर्ग निर्माण और वर्ग विद्वेष को लगातार बढ़ाया। ये आधार हैं धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, गरीब-अमीर, किसान-मजदूर, शहर-ग्रामीण आदि। इनमें मोदी जी ने भाषा के मामले में पहल करके करीब-करीब ठीक दिशा पकड़ ली है। समान नागरिक संहिता की आवाज बुलंद करके साम्प्रदायिकता, जाति भेद, लिंग भेद पर भी नकेल कसने की तैयारी है। अन्य मामलों में भी नरेंद्र मोदी सरकार धीरे-धीरे कदम उठा रही है। जिस तरह 67 वर्षों तक समस्याएँ बढ़ी या बढ़ाई गईं और उनका जितना बड़ा भंडार इकट्ठा हो गया

है, उन पर नियंत्रण करना कोई साधारण काम नहीं। उन परिस्थितियों में तो यह काम और भी कठिन हो जाता है जब जेएनयू से पढ़े हुए छात्र निकलकर न्यायपालिका और कार्यपालिका के महत्वपूर्ण पदों पर विराजमान हो तथा समाधानकर्ता की यह मजबूरी हो कि उसे इन सबको साथ लेकर ही आगे बढ़ना होगा। आप कल्पना कर सकते हैं कि कार्य कितना कठिन है फिर भी नरेंद्र मोदी के नेतृत्व की भारत सरकार धीरे-धीरे एक-एक समस्या को हल करने की दिशा में निरंतर बढ़ रही है।

फिर भी अभी मोदी जी के लिए अनेक काम करने बाकी हैं जिनकी अभी शुरुआत भी नहीं हुई है। कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि की दिशा में अब तक कोई कदम नहीं उठाया गया है, जबकि श्रम शोषण, आर्थिक असमानता, पर्यावरण प्रदूषण सहित सभी प्रकार की आर्थिक समस्याओं के समाधान में इसका महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है।

समान नागरिक संहिता और समान आचार संहिता के बीच का अंतर या तो मोदी जी अब तक स्वयं नहीं समझ पाए हैं अथवा वे प्रतीक्षा कर रहे हैं। इसी तरह अपराध और गैरकानूनी तथा असामाजिक समस्याओं के वर्गीकरण की दिशा में भी कोई प्रयास नहीं दिख रहा है। मैं मानता हूँ कि भारत में विचार मंथन का अभाव इसके लिए सर्वाधिक दोषी है। हम सारा दोष सरकार पर ही नहीं डाल सकते। विचार मंथन ही सरकार को नई दिशा दे सकता है। हमें पूरा प्रयास करके अन्य उन मुद्दों पर सरकार को सलाह देनी चाहिए जिनके विषय में अब तक सरकार ठीक दिशा में नहीं सोच पा रही है।

मैं आश्वस्त हूँ कि नरेंद्र मोदी के आने के बाद भारत की समस्याओं के समाधान की गति ठीक दिशा में और ठीक गति से आगे बढ़ रही है।

हमारा कर्तव्य है कि हम इस गति को और बढ़ाने में सहायक हों। हम निरंतर विचार मंथन को प्रोत्साहित करें, जनमत जागृत करें, सरकार को उचित सलाह भी दें तथा सरकार के सही कार्यों का पूरा-पूरा समर्थन भी करें तभी इतनी पुरानी जड़ पकड़ चुकी समस्याओं का समाधान संभव है।

भारत में चार प्रकार की समस्याएँ हैं– (1) व्यक्तिगत, (2) सामाजिक, (3) आर्थिक और (4) राजनैतिक। व्यक्तिगत समस्याओं का एकमात्र समाधान अपराध नियंत्रण की गारंटी से है, जो राज्य को देना चाहिए। सामाजिक समस्याओं का एकमात्र समाधान समान नागरिक संहिता है। इसी तरह राजनैतिक समस्याओं का एकमात्र समाधान लोकस्वराज्य प्रणाली से और आर्थिक समस्याओं का एकमात्र समाधान कृत्रिम ऊर्जा की भारी मात्रा में वृद्धि है।

दुनिया की अनेक बड़ी समस्याएँ धर्म , राष्ट्र, अर्थ आदि के माध्यम से वर्चस्व प्राप्त करनेकी छीना-झपटी का परिणाम है। इनमें भी राज्य की भूमिका सर्वाधिक है।

मुस्लिम सांप्रदायिकता से सुरक्षा के लिए यदि हिंदू सांप्रदायिकता का सहारा लेना पड़ रहा है तो यह हमारी अल्पकालिक मजबूरी हो सकती है, किंतु समाधान नहीं। क्योंकि हिन्दुत्व में संगठन, निरपेक्षता और अहिंसा के संस्कार बचपन से ही डाल दिये जाते हैं। ऐसे संस्कारों को बदलना बहुत कठिन होता है।

समाधान में तीन प्रकार के लोग सक्रिय होते हैं– (1) संगठन प्रधान, (2) आचरण प्रधान , (3) विचार प्रधान। यदि परिवार के किसी सदस्य का पैर टूट जाए और ठीक होने का कोई माध्यम न हो तो बैसाखी का सहारा लेना मजबूरी है। किंतु यदि पैर ठीक होना संभव है तो बैसाखी की जरूरत नहीं। पैर को ठीक कराना चाहिए। जब किसी समस्या के समाधान के लिए आचरण प्रधान या विचार प्रधान मार्ग उपलब्ध न हो तब संगठन प्रधान मार्ग का सहारा लिया जा सकता है अन्यथा संगठन प्रधान मार्ग उचित नहीं है।

समस्या का एक समाधान न होकर हमें कई दिशाओं में एक साथ काम करना होगा। पानी को इतना महंगा कर दिया जाए कि पानी का अनावश्यक उपयोग कम हो जाए। साथ ही पानी का इस तरह एकत्रीकरण भी हो कि जल स्तर बढ़े। इसके साथ ही सरकारों को अपना तरीका भी बदलना चाहिए सरकार सारे काम अपने जिम्मे लेने की अपेक्षा न्याय और सुरक्षा के अतिरिक्त सारे काम लोगों को स्वतः करने दे और सरकार उस कार्य में सहायक की भूमिका में हो, उत्तरदायी की भूमिका में नहीं।

मूलतः सुरक्षा और न्याय राज्य का दायित्व होता है तथा अन्य सभी प्रकार के कार्य उसके स्वैच्छिक कर्तव्य। भारत में धूर्त लोग सुरक्षा और न्याय की अपेक्षा शिक्षा, स्वास्थ्य, धार्मिक, जातीय असमानता, बेरोजगारी आदि को राज्य का दायित्व बताकर राज्य को विचलित करने के लिए प्रेरित करते हैं, यही नहीं राज्य को भी वैसे ही कार्यों में मजा आता है।

समस्याएँ चरित्र के अभाव में नहीं बढ़ीं हैं, बल्कि सत्ता के केन्द्रीयकरण के कारण चरित्र लगातार गिरता चला गया।

पत्रोत्तर

प्रश्न- आपने महंगाई को अस्तित्वहीन समस्या लिखा है जबकि भारत में हर व्यक्ति को महंगाई दिखती है

उत्तर- भारत के राजनेताओं ने षड्यंत्र करके मुद्रा स्फीति को महंगाई के नाम से प्रचारित कर दिया जबकि मुद्रा स्फीति और महंगाई की परिभाषा बिलकुल अलग- अलग होती है । महंगाई का प्रभाव सिर्फ उस समय होता है जब आम लोगों की क्रय शक्ति की तुलना में उपभोक्ता वस्तुओं के मूल्य अधिक बढ़ते हैं जबकि मुद्रा स्फीति का प्रभाव सिर्फ नकद रुपये पर अघोषित कर के रूप में होता है । जब महंगाई बढ़ती है तब सोना चाँदी जमीन सब के मूल्य कम होते हैं जबकि वर्तमान भारत में इन सब के मूल्य बढ़ रहे हैं । आवागमन भी लगातार बढ़ रहा है। इसलिए यह बात साफ दिखाई देती है की स्वतन्त्रता के बाद महंगाई लगातार घटी है। सच्चाई यह है की स्वतन्त्रता के बाद उपभोक्ता वस्तुओं की तुलना में आम लोगों की क्रय शक्ति 8 गुना तक अधिक बढ़ी है । किसी मजदूर को खेतों में काम करने के लिए उस समय जितना अनाज मिलता था उससे आज 8 गुना अधिक मिल रहा है।

डॉ बसंतीलाल बाबेल सरदारगढ़, राजसमंद, राजस्थान

पत्र- ज्ञान तत्व काफी लंबे समय से मिल रहा है। यह बहुआयामी पत्रिका है जो धार्मिक एवं आध्यात्मिक विषयों के साथ-साथ समसामयिक प्रसंग पर भी प्रकाश डालती है। मेरी हार्दिक शुभकामनाएं। सहयोग राशि 200 रुपए प्रस्तुत कर रहा हूं कृपया स्वीकार करें।

उत्तर- बसंतीलाल बाबेल जी आपका पत्र और ₹200 की राशि मिली। इसके लिए हार्दिक धन्यवाद किंतु मैं आप जैसे विद्वान से कुछ अधिक उम्मीद कर रहा था कि आप मेरे लिखे हुए पर कुछ समीक्षा भी करेंगे क्योंकि यह ठीक नहीं है कि मैं लिखता रहूं और आप सिर्फ पढ़ते रहे। मुझे कहीं अपनी गलती का पता ही ना चले। विचार प्रचार हमारा उद्देश्य नहीं है बल्कि विचार मंथन है। मुझे उम्मीद है कि कभी-कभी समय निकालकर आप अपने भी विचार देंगे।

ज़ूम चर्चा कार्यक्रम की समीक्षा

दिनांक 6.5.2025 को " समाज में कायरता बढ़ रही है या हिंसा। आम लोग किस दिशा में बढ़ रहे हैं। इसका कारण क्या है उसका परिणाम क्या है। हम यह भी विचार करेंगे कि हिंसा, अहिंसा, कायरता, आत्मरक्षा आदि के बीच किस प्रकार का फर्क होता है" विषय पर चर्चा हुई। चर्चा में मुख्य बात यह थी कि वर्तमान समय में भारतीय समाज किस तरफ कायरता या हिंसा की ओर जा रहा है।

आज के भारत में राज्य की सत्ता सर्वोच्च है। समाज नेपथ्य में चला गया है। जीवन के सभी क्षेत्रों पर, व्यक्ति के समग्र अधिकारों पर सरकार हावी है। आजादी के बाद गांधीवादी विचारों से प्रभावित होकर राज्य ने न्यूनतम हिंसा की नीति अपनाई। जबकि यह नीति दोषपूर्ण है। राज्य को हिंसा का प्रयोग उस सीमा तक करना चाहिए जब तक समाज और व्यक्ति की सुरक्षा सुनिश्चित न हो। इस गलत नीति का परिणाम यह हुआ कि राज्य अपने नागरिकों को न्याय नहीं दिला पाया। अपराधिक तत्वों का समाज पर दबदबा कायम हुआ। कालांतर में समाज में असंतोष पनपा जिसके कारण सामाजिक हिंसा में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई। उदाहरण के लिए एनकाउंटर संस्कृति इसी असंतोष की देन है। जब कुख्यात अपराधी न्यायालय से या सरकार से दंडित नहीं हो पाए तब समाज ने इस तरीके से न्याय को पाने की कोशिश की। व्यक्तिगत मामलों में भी दोषपूर्ण कानून के चलते हिंसा देखी जा रही है। यह कहना गलत नहीं होगा कि राज्य पूरी तरह से सुरक्षा और कानून व्यवस्था लागू करने में असफल रही है।अगर राज्य अहिंसक है तो हिंसा बढ़ती है। दुर्भाग्य से यही हो रहा है।

अगर हम समाज की बात करें तो यह देखा जा रहा है कि कोई भी व्यक्ति या समूह अगर कमजोर है तो मजबूत से डरता है परंतु अपने से कमजोर को दबाता है। यह एक प्रकार की कायरता है जो हमारे समाज में हाल के वर्षों में आई है। यह भारतीय संस्कृति के मूल्य के बिल्कुल खिलाफ है।

आज जो स्थिति बनी है इसका कारण यह है कि हमने शास्त्र की अपेक्षा शास्त्र को महत्व देना शुरू किया। बुद्धि की जगह संगठन को वरीयता दी। इस कारण समाज में कायरता और हिंसा में वृद्धि हो रही है।

अगर निष्कर्ष के रूप में कहा जाए तो लोकतंत्र में सामाजिक हिंसा की कोई जरूरत नहीं है। राज्य को शांति, सुरक्षा और कानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए अधिकतम बल प्रयोग की नीति अपनानी चाहिए।

चर्चा सार्थक एवं उद्देश्य पूर्ण रही। इसमें विपुल आदर्श, बृजेश राय,पवंजय त्रिपाठी, आचार्य सुनील देव, माता प्रसाद कुरू, मोहन गुप्ता आदि ने अपने विचार रखे।

2 दिनांक 8 5 2025 को जूम चर्चा में वर्ण और जाति व्यवस्था पर चर्चा हुई। इस बात पर मंथन किया गया कि वर्ण या जाति का आधार जन्म हो या कर्म। साथ ही मुस्लिम, ईसाई, सिख जैसे समुदायों में यह व्यवस्था कैसे लागू की जाए? वर्ण या जाति व्यवस्था भारतीय समाज की अभिन्न पहचान रही है। प्राचीन काल से ही किसी न किसी रूप में इसने समाज को गहरे प्रभावित किया है। यह व्यवस्था जन्म या कर्म से यह बहस का विषय है। प्रारंभ में यह व्यवस्था समाज में समरसता और कार्यों के विभाजन को लेकर बनाई गई लेकिन कालांतर में किसने जाति का रूप ले लिया जो एक बंदव्यवस्था है। जाति का आधार भी कहीं ना कहीं कर्म ही रहा है। औपनिवेशिक काल में इस व्यवस्था को एक षड्यंत्र के तहत सामाजिक समस्या का नाम दिया गया। सामाजिक विभेद पैदा करने के लिए ईसाई मिशनरीज ने विभिन्न उपायों के माध्यम से छुआछूत और अस्पृश्यता जैसी बातें कही। तत्कालीन भारत में ऐसे लोगों को खड़ा किया गया जिन्होंने अंग्रेजों के साथ मिलकर इस विमर्श को हवा दी। दुर्भाग्य से आजादी के बाद भी हमारे नेताओं ने या शासन व्यवस्था ने इसे अपने फायदे के लिए इस्तेमाल किया। आरक्षण जैसी व्यवस्था ने कोढ मे खाज का काम किया। जाति व्यवस्था इतनी भी खराब नहीं है जितना वर्तमान समय में इसे पेश किया जाता है।

बात यहां पर यह है कि इसका समाधान क्या है? हमारे मार्गदर्शक मुनि जी ने अपनी रूपरेखा पेश की। उनके अनुसार पहले के समय में वर्ण के साथ अनेक तरह की जातियां जुड़ी हुई थी। यह जातियां समय के साथ कठोर हो गई । आज का जो दलित समुदाय है वह प्रतिलोम विवाह की देन है। उन्होंने अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए कहा कि योग्यता के आधार पर वर्तमान भारत में एक नई तरह की श्रेणी बनाई जानी चाहिए। इसके लिए उसके गुणोंके आधार पर एक परीक्षा का आयोजन कर उसे विशेष श्रेणी का दर्जा प्रदान करना चाहिए। मार्गदर्शक, पालक और सेवक का दर्जा मिलना चाहिए। ऐसे व्यक्ति समाज के विभिन्न क्षेत्रों में अपने दायित्वों का निर्वाह करेंगे ।

चर्चा सार्थक एवं उद्देश्य पूर्ण रही। इसमें विपुल आदर्श, ज्ञानेंद्र आर्य,पवंजय त्रिपाठी, विपिन तिवारी, मदन आर्य, पूरन सिंह आदि ने भाग लिया।

3 दिनांक 10.5.2025 को जूम चर्चा मे विवाह संस्था पर चर्चा हुई जिसमें कई बिंदुओं पर प्रकाश डाला गया। इसमें विवाह का स्वरूप, बहु विवाह, विवाह मे सरकारी हस्तक्षेप, विवाह की आयु प्रमुख रहे। विवाह किसी भी समाज की आधारशिला होती है। यही वह संस्था है जिसके दम पर परिवार, समाज और राष्ट्र की रचना होती है। इसको संवैधानिक संस्था कहना सही नहीं होगा क्योंकि इसका उल्लेख संविधान में नहीं है। यह बात अलग है कि विवाह को कानूनी मान्यता मिली हुई है। बहु विवाह सामाजिक परिस्थितियों की देन है। मध्यकाल में किन्ही कारणों से समाज में महिलाओं की संख्या मर्दों से अधिक हुई जिसके कारण बहु विवाह की शुरुआत हुई। राजा रजवाड़े अपनी सत्ता का विस्तार करने के लिए भी बहु विवाह का प्रचलन हुआ। इसमें सरकारी हस्तक्षेप अनुचित है।

विवाह के लिए उम्र का निर्धारण समाज, परिवार और परिवेश पर निर्भर करता है। स्त्री पुरुष 15 16 वर्ष की उम्र तक प्राकृतिक रूप से सक्षम हो जाते हैं । इस अवस्था में विवाह में कोई हर्ज नहीं है। सरकार द्वारा कानून बनाना सामाजिक व्यवस्था में अनुचित हस्तक्षेप है। तलाक और विवाह विच्छेद जैसे मुद्दे पूरी तरह से समाज और परिवार के अधीन होने चाहिए। आजकल इस तरह के मुद्दे सरकारी संस्थाओं के माध्यम से हल किया जा रहे हैं जो सामाजिक व्यवस्था को क्षति पहुंचा रहे हैं। परिवार या समाज ही सही तरीके से यह तय कर सकता है कि किसी भी संबंध में कौन सही है और कौन गलत । न्यायालय केवल कानून द्वारा फैसला देता है जो न्याय की गारंटी नहीं है।

हमारे यहां स्त्री पुरुष संबंध में कई तरह की मर्यादाएं होती हैं। अनैतिक संबंधों पर हमारे यहां सामाजिक और पारिवारिक रूप से प्रतिबंध है। परंतु समस्या तब आती है जब ऐसे विषयों को लेकर सरकार कानून के माध्यम से दखल देती है। इससे सामाजिक ताने-बाने को नुकसान पहुंचता है और अनावश्यक रूप से मुकदमों में वृद्धि होती है। अतः समाज को यह तय करने का अधिकार है इस तरह के संबंधों को वह कैसे नियंत्रित और अनुशासित करता है।

महिला सशक्तिकरण और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के नाम पर भारत राज्य ने यहां के सामाजिक व्यवस्था को एकदम हाशिए पर डाल दिया है। जरूरत है फिर से समाज को उसकी जिम्मेदारी को वहन करने दिया जाए।

चर्चा सार्थक उद्देश्य पूर्ण रही। इसमें विपुल आदर्श, बृजेश आर्य, मदन आर्य,पवंजय त्रिपाठी, ज्ञानेंद्र आर्य, नीता आर्य आदि ने भाग लिया।

4 दिनांक 13 5 2025 को जूम चर्चा में कामवासना संबंधी विषय पर चर्चा की गई। इसमें विभिन्न पहलुओं पर बात की गई जो वर्तमान समाज में चल रहे हैं। चर्चा की शुरुआत कामवासना को नियंत्रित और अनुशासित करने पर हुई। यह सत्य है कि सेक्स एक प्राकृतिक भूख है जिस पर नियंत्रण करना असंभव है। हमें इस बात पर भी ध्यान रखना होगा कि अगर हम इसे खुली छूट देते हैं तो समाज में अराजकता आ सकती है। इसे विभिन्न उपायों से अनुशासित कर सही दिशा में बढा जा सकता है। वैसे संबंध जो वापसी सहमति से बनते हैं उन्हें समाज के दायरे से बाहर रखना चाहिए जब तक कि कोई अप्रिय घटना न घट जाए। सहमति से बनने वाले संबंध अनैतिक हो सकते हैं अपराध नहीं। ऐसे संबंधों को परिवार के भीतर ही सुलझाने में समझदारी है।

चर्चा में इस बात पर भी मंथन किया गया कि ऊंची जाति और संपन्न वर्ग ने सेक्स के मामले में उच्च आदर्श स्थापित कर मामले को और बिगाड़ दिया है।यह देखा जाता है कि ऊंची जातियों में शारीरिक संबंधों के मामले में अधिक कठोरता दिखती है दलित वर्गों के मुकाबले। वर्तमान समय में भी ऊंची जातियों में विधवा विवाह पर रोक है। इसके अलावा इस वर्ग में महिलाओं की सुरक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता है। यह जो उच्च मानदंड है स्थिति को बिगड़ने में योगदान दिया है। समाज में यह चर्चा का विषय रहता है कि कामवासना स्त्रियों में अधिक रहती है कि पुरुषों में। इस बात में अधिक दम नहीं है क्योंकि स्त्री हो या पुरुष कामवासना दोनों में रहती है। शारीरिक संबंध के दौरान दोनों समान रूप से आनंद लेते हैं और आनंद प्रदान करते हैं। महिला और पुरुष दोनों एक दूसरे का भोग करते हैं।चर्चा का अन्य बिंदु यह था कि स्त्री को आकर्षक और पुरुष को शारीरिक रूप से मजबूत होना चाहिए। यह बात देखी जाती है कि अगर पुरुष मजबूतकद काठी का है, उसमें आक्रामकता है, पुरुषत्व है तो ऐसा व्यक्ति स्त्रियों को अपनी ओर आकर्षित करने में सफल होता है। इसी तरह अगर स्त्री आकर्षक है तो वह पुरुषों को अपनी ओर खींचने में सफल होती है।

आमतौर पर सेक्स पर सार्वजनिक चर्चा उचित नहीं दिखती परंतु सामाजिक मार्गदर्शक होने के नाते हमारा दायित्व बनता है कि इन सभी बातों पर मंथन कर एक काम राय बनाएं।चर्चा सार्थक एवं उद्देश्य पूर्ण रही।

साथियों की कलम से -

'छुआछूत': सुचिता से शोषण तक का सफर

ज्ञानेन्द्र आर्य

माँ संस्थान द्वारा आयोजित रात्रिकालीन ज़ूम मीटिंग में छुआछूत को लेकर अत्यंत रोचक और विचारोत्तेजक चर्चा हुई। वरिष्ठ पत्रकार और समाज चिंतक श्रीकांत सिंह और समाज शास्त्री पवनजय त्रिपाठी के अनुसार, भारतीय धार्मिक कथाओं में वर्णित अवतारों ने, परशुराम को छोड़कर, अधिकांशतः ब्राह्मणवादी रूढ़ियों के विरुद्ध अपनी लीलाएँ कीं। यह कथन न केवल विषय को गहराई से समझने में महत्वपूर्ण है, बल्कि सामाजिक संरचना और व्यवस्था में व्याप्त रूढ़ियों व विकारों पर सार्थक विमर्श भी प्रस्तुत करता है। इसे समझने के लिए पहले छुआछूत के मर्म को समझना आवश्यक है। प्रश्न यह है कि, क्या किसी को छूना शासन या सत्ता के दबाव से अनिवार्य किया जाना चाहिए? अथवा, क्या सुचिता के नाम पर किसी को सार्वजनिक रूप से कमतर ठहराकर उनके साथ दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाना उचित है?

हमारी भारतीय सभ्यता में सुचिता का विशेष महत्व है। सामाजिक मान्यताओं में यम (निषिद्ध कार्य) और नियम (कर्तव्य) की महत्ता सर्वोपरि है। छुआछूत केवल त्वचा के संपर्क तक सीमित नहीं है, बल्कि दृष्टि, गंध, और श्रवण जैसे संदर्भों में भी इसे लागू किया जाता रहा है। व्यक्तिगत जीवन में सुचिता को अपनाने वाला व्यक्ति श्रेष्ठ माना जाता है। इसी आधार पर ब्राह्मणों को समाज में अत्यधिक सम्मान प्राप्त हुआ, क्योंकि उनकी आचरणगत शुद्धता, स्वाध्याय, और आध्यात्मिक प्रकृति उन्हें ज्ञानमार्गी बनाती थी। विचारशीलता और उनकी प्राचीन शोध ग्रंथों तक पहुंच ने उन्हें समाज के मार्गदर्शक के रूप में स्थापित किया।

हालाँकि, यही सम्मान और श्रेष्ठता का भाव अक्सर ब्राह्मणों में अहंकार का रूप ले लेता है। मार्गदर्शक होने का प्रभुत्व और शुद्ध आचरण का बोध उन्हें समाज के अन्य वर्णों को दोयम दर्जे का मानकर शोषण करने का अवसर प्रदान करता है। व्यक्तिगत सुचिता, जो स्वाध्याय और आध्यात्मिक साधना के लिए आवश्यक है, कई बार केवल श्रेष्ठता के प्रदर्शन तक सिमट कर रह जाती है। यह सुचिता, सार्वजनिक जीवन में, समाज के एक बड़े हिस्से के प्रति दुर्भावनापूर्ण व्यवहार और शोषण का आधार बन जाती है। यद्यपि इस शोषण को व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का हनन न होने के कारण अपराध की श्रेणी में न रखा जाए, तो भी यह अनैतिक तो है ही। भारतीय वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुसार, ब्राह्मणों के लिए शोषण को भी एक जघन्य अपराध माना गया है।

मेरे विचार से, श्रीकांत सिंह के कथन का यही संदर्भ उपयुक्त है। जब ब्राह्मण श्रेष्ठता के अहंकार में डूबकर 'अहम् ब्रह्मास्मि' और 'एकोऽहम् द्वितीयो नास्ति' का सार्वजनिक प्रदर्शन करने लगता है, तो उसे दंडित करना आवश्यक हो जाता है । सुचिता का सिद्धांत, जो व्यक्तिगत

जीवन को उत्कृष्ट बनाते हैं, उसी का दुरुपयोग कर समाज के एक बड़े हिस्से को दोयम दर्जे का नागरिक बनाया गया। क्षत्रिय और वैश्य वर्ण के पास ब्राह्मणों को सुरक्षा और सुविधाएँ देकर स्वयं को बचाने का एक रक्षाकवच तो था, किंतु सेवा कार्य में लगे शेष समाज के पास अपनी रक्षा का कोई साधन नहीं था। श्रेष्ठता के भौंडे प्रदर्शन ने इस वर्ण का जीवन दूभर कर दिया। उनकी सार्वजनिक सहभागिता को नकारा गया, और ग्राम सभाओं जैसे मंचों से उन्हें बहिष्कृत सा किया गया। यह सामाजिकता और मानवता की हत्या ही थी, और विडंबना यह कि यह सब उन लोगों द्वारा किया गया, जिन पर सामाजिकता और मानवता के पोषण की जिम्मेदारी थी।

वर्ण व्यवस्था में वैचारिक शीर्ष पर बैठा ब्राह्मण, शक्ति और संचय के वर्णों (क्षत्रिय और वैश्य) को अपने प्रभाव में लेकर शेष समाज पर अत्याचार करने लगा। ऐसे में, चेतना के उच्चतम मापदंडों को छूने वाले अवतारों ने इनका दमन किया और समाज को सद्गति की शिक्षा दी। इन अवतारों की महत्ता को न केवल ब्राह्मणों ने बल्कि समाज ने स्वीकार कर उन्हें पूजनीय माना। आखिर भारतीय सामाजिक तानेबाने में वैचारिकी को परम चेतना का प्रिय भी तो बनाये रखना आवश्यक था, उसे भला समाज व्यवस्था का कोई घटक छेड़ कैसे सकता था। यह वह वैचारिक संतुलनवाद था जो आदि काल से हिंदुत्व की कुल जमा पूंजी थी।

गतांक से आगे...

जीवन पथ

(अब तक अपने पढ़ा कि प्रोफ़ेसर श्रीवास्तव और उनके छात्रों के मध्य समाज की दिशा तय करने वाले बेहद महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा कर रहे थे। सिमी विवेक आदि मित्रों की चर्चा का आज आप उपसंहार पढेंगे। इसी के साथ आज इस उपन्यास का भाग 2 समाप्त हो जायेगा)

योग्य पुरूष स्वयं द्वारा किए गए पुरूषार्थ का श्रेय भी स्वयं को नहीं लेने देते हैं। सम्भवतः उनका यही प्रयास उनके चरित्र को और उज्जवल बना देता है। .....प्रोफेसर एक बार उसकी तरफ देखते है और आगे कहते है- तुमने आज मुझे अपनी योग्यता से संतुष्ट किया है और उसका पारितोषिक केवल आशीष ही मांगा है। आज मेरा मन तुम्हें केवल आशीष देकर सन्तुष्ट नहीं हो रहा है। यदि मेरा वश चलता तो आज मैं तुम्हें, तुम्हारे लक्षणों के एवज में प्रकृति की दिशा तय करने का अधिकार भी दे देता। ....तुम सभी जीवन-पर्यन्त परिस्थिति के अनुसार मर्यादाओं का पालन करते रहो, मेरा यह आशीष तुम्हें है। ....प्रोफेसर इतना कहते हुए अपनी बात समाप्त करते हैं। विवेक, क्लास की ओर से उनके प्रति कृतज्ञता जाहिर करते हुए कहता है- आपने हमारे सामने विभिन्न विषयों की जो व्याख्या की है वह हमें तो जीवन-दर्शन के रूप में स्वीकार है। हम सभी की यही आकांक्षा है।

लेकिन तुम में से कोई भी कभी मेरा अनुयाई न बनना, बल्कि मेरे विचारों का विश्लेषक बनना, मैं तुम लोगों से सदैव के लिए यह अपेक्षा करता हूँ कि तुम सभी जीवन में किसी भी महत्वपूर्ण निर्णय के समय भावना के वशीभूत होकर नहीं बल्कि विचार की कसौटी पर निर्णय करोगे। जिसकी उपयुक्तता को यथार्थ का दर्शन स्वीकार करे, उसे तुम स्वीकार कर लेना अन्यथा उसे त्याग देना। चाहे वह बात स्वयं मैने ही क्यों न कही हो।

जी! .....क्लास में समवेत स्वर गूँजता है।

आज, जब क्लास में आनें से पहले सिमी ने मुझसे धर्म के मूल तत्व की व्याख्या करने का आग्रह किया था तो मेरे सामने यह प्रश्न था कि क्या मैं राज्य द्वारा स्थापित धर्म के ढाँचे की व्याख्या करूँ, मनुष्य-कृत सम्प्रदायों (जिन्हे कथित रूप से धर्म स्वीकार कर लिया गया है) की व्याख्या करूँ या मानव संस्कृति के मूल तत्व अर्थात प्राकृत धर्म की व्याख्या करूँ। .....इस विषय पर आत्मिक विश्लेषण करते हुए मैने पाया कि राज्य द्वारा स्वीकार कर लिए गए धर्म के निश्चित प्रारूप की परिभाषा एवं

मनुष्य-कृत सम्प्रदायों की परिभाषा व्यक्ति के जीवन की प्राकृतिक स्वतन्त्रता का सीमांकन कर देते हैं और सीमांकित परिभाषा का तत्व कभी-भी विकास की कसौटी पर खरा नहीं उतर सकता है। ....मेरे बच्चों! यदि धर्म के गुण प्रधान दृष्टिकोण के आधार पर राज्य की नीति का विश्लेषण किया जाए तो यह सूत्र स्पष्ट होता है कि समाज की स्वतन्त्रता का सीमांकन करना राज्य का विषय नहीं होता है, बल्कि उसे तो केवल समाज के ढाँचे में व्याप्त असामाजिक तत्वों पर नियन्त्रण करना है। मूलतः व्यवस्था का कौशल समाज पर कानून अथवा शक्ति के अन्य स्रोत द्वारा नियन्त्रण करने से सिद्ध नहीं होता है। इसलिए कानून, समाज के लिए सर्वोच्च विषय नहीं है। कानून तो केवल पथ-भ्रष्ट लोगों को नियन्त्रण में रखने के लिए समाज की इच्छा से राज्य द्वारा की गयी व्यवस्था का प्रत्यक्ष रूप है। अर्थात लोकतन्त्र में राज्य, समाज के सामने कानून के रूप में ही प्रकट होता है। लेकिन मैं पुनः इस बात को जोर देकर कहुँगा कि कानून केवल पथभ्रष्ट लोगों पर नियन्त्रण के लिए समाज द्वारा निर्मित तथा राज्य द्वारा क्रियान्वित व्यवस्था है। मूलतः व्यवस्था तथा नियन्त्रण, इन दोनों शब्दों के अर्थ को समझने में धर्म का गुण प्रधान स्वरूप हमारा समुचित मार्गदर्शन करता है। हमे इसे समझना एवं स्वीकार करना चाहिए।इस विषय पर विवेक द्वारा की गयी टिप्पणियां भी हमारी मदद कर सकती हैं। इसने विषय की चर्चा के अन्तर्गत जब कहा कि व्यक्ति को कभी-भी राज्य के प्रति उत्तरदायी होने की आवश्यकता नहीं होती है बल्कि उसे समाज के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए तो मुझे इसका यह दृष्टिकोण स्वीकार करने में कोई उलझन नहीं हुई। क्योंकि राज्य स्वयं को समाज की व्यवस्था का नियामक मानकर कई बार जीवन की प्राकृतिक स्वतन्त्रता का ह्रास करता है। व्यक्ति मात्र के समाज के प्रति उत्तरदायी होने से हम स्वतन्त्रता के सार्वभौमिक स्वरूप को समाज के प्रति उत्तरदायी होने में सरलता पूर्वक स्वीकार किए रहेगें। इस प्रक्रिया के द्वारा राज्य के इस स्वाभाविक दोष का निराकरण होगा जिसके द्वारा वह स्वेच्छाचारिता को अपना मूल अधिकार मानता है। .....इतना कहकर प्रोफेसर संक्षिप्त अवधि के लिए चुप होकर पुनः बोलते हैं- मै नीति और धर्म के सम्बन्ध के विषय में अपनी सूक्ष्म बात कहकर यह शैक्षणिक सत्र समाप्त करूँगा। .....मेरे विद्यार्थियों, इस विषय में मैं अपना चिन्तन तुम लोगों के सामने रखता हूँ, उसकी जितनी व जैसी उपयोगिता तुम्हें कभी जीवन में महसूस हो उसे स्वीकार कर लेना और जो न हो उसे त्याग देना। क्योंकि नीति शब्द को परिभाषित करते हुए मैं, तुम लोगों से यह नहीं कहुँगा कि मेरा प्रत्येक विचार तुम लोगों के लिए किसी प्राकृतिक सिद्धान्त की तरह है, उसे स्वीकार किया जाना आवश्यक है। यदि मैं ऐसा कहता हूँ तो वह नीति के विरूद्ध होगा। मेरे विचार तुम लोगों के यथार्थ के अनुसार सिद्ध होते हैं या नहीं, उन्हें स्वीकार किया जाना चाहिए या नहीं, यह परिस्थितिजन्य निर्णय तुम्हें (व्यक्ति) स्वयं ही करना चाहिए। इस सत्र में तुम सब मेरी यह अन्तिम बात समझ लेना कि धर्म, व्यक्ति का मार्गदर्शन करता है, उसके आचरण को शुद्ध करता है और नीति मार्ग के समान होती है। मनुष्य के व्यवहार को उचित दिशा में विकसित करना समाज में धर्म और नीति के सम्बन्ध का परिणाम है। मैने तो व्यक्ति के चरित्र के निर्माण का यही सूत्र स्वीकार किया है और मैं, तुम लोगों से यह आशा करता हूँ कि तुम सब नीति और धर्म के इस सम्बन्ध को यथास्थिति समीक्षा करके ही स्वीकार करोगे। मेरा आशीष तुम सब के लिए सदैव रहेगा। ....और प्रोफेसर श्रीवास्तव इतना कहकर अपना उदबोधन समाप्त करते हैं। उनके चुप होने पर क्लास रूम में शून्य छा जाता है।

कुछ क्षण बाद सिमी उसे भंग करते हुए कहती है- मैने भारत की पौराणिक गाथाओं में यहाँ के गुरूकुलों की शिक्षा पद्धति के विषय में पढा था लेकिन आज उसे जीकर देखा है, अपने रोम-रोम में महसूस करके देखा है। मैं यह नहीं कहती कि इस विमर्श में प्रस्तुत किया गया प्रत्येक तर्क ठीक था, लेकिन जो समाज ऐसा विचार-विमर्श करके कोई निष्कर्ष प्राप्त करता है, मेरी नजर में उसका वैचारिक स्तर महान होगा ही। दुनिया की आधुनिक शिक्षण संस्थाओं में छात्रों को नित नई तकनीक सिखाई जाती होगी, उन्हें व्यवसाय के न जाने कितने मन्त्र बताए जाते होगें! लेकिन मनुष्य के चरित्र निर्माण के मन्त्र तो भारत की शिक्षण संस्थाओं मे बताए जाते हैं। मैं तो स्वयं को भाग्य की धनी समझती हूँ कि मैने आज आपसे समाजशास्त्र की दीक्षा ली है। प्राचीन काल से यह देश गुरूओं की पूजा क्यों करता आया है, मुझे तो यह रहस्य स्पष्ट हो गया है। मैं जाकर अपने पिता से यह अवश्य कहुँगी कि विश्व के जनमानस को धर्म की परिभाषा भारतीय दर्शन से सीखनी चाहिए। ....प्रोफेसर, सिमी की बात स्वीकार करते हुए सभी को आशीर्वाद देते हैं और क्लास का विदाई पर्व मनाने हेतु आज का शैक्षणिक सत्र विसर्जित करते है। ....सिमी, नीरू के साथ क्लासरूम छोड़ती है लेकिन वह विवेक से पूछना चाहती है कि दुनिया के सामने धर्म के वास्तविक स्वरूप को पुनः परिभाषित करने वाले लोग भला समाज में इसके स्वरूप की स्थापना का सरल उपाय क्यों नहीं बताते हैं? .....यह किसका दायित्व है। कुछ धर्मज्ञ पुरूषों का या सम्पूर्ण समाज का। हमे इस विषय पर भी सोचना होगा। मानवता के मस्तिष्क पर लिखा यह प्रश्न तब तक अनुत्तरित रहेगा जब तक प्रोफेसर सर तथा विवेक का चिन्तन समाज की जीवन प्रणाली नहीं बन जाता! .....इस प्रश्न का उत्तर कौन देगा? ....सिमी का चिन्तन क्रम एक बार टूटता है लेकिन वह पुनः स्वयं से कहती है -क्या कोई व्यक्ति या समाज!....और इसी बीच सिमी की चिन्तन मग्न स्थिति में नीरू व्यवधान डालती है- क्या सोच रही हो सिमी?- वह अपने चिन्तन क्रम से उचाट होकर नीरू से कहती है- क्या भविष्य में कभी गांधी का यह योग्य विचार-वंशज मानव समाज की वैसी ही सेवा कर सकेगा जैसी की अपेक्षा आज हमारे मार्गदर्शक ने उससे की है?

तू कहना क्या चाहती है! ऐसा कौन गांधी का वंशज है जिसके विषय में तू इतनी गम्भीरता से सोच रही है?

क्या प्रोफेसर श्रीवास्तव का सबसे प्रिय शिष्य विवेक, गांधी की चिन्तनधारा का योग्य वंशज नहीं कहला सकता है?

लेकिन भारत की परिसीमाओं में रहने वाला कौन सा व्यक्ति गांधी की मानस सन्तति नहीं है! इस अधिकार पर किसी के नाम का दावा कैसे किया जा सकता है? ....नीरू उससे गम्भीरतापूर्वक पूछती है।

भला विरासत पाने का प्रलोभन किसे नहीं होता है और इस देश में ऐसा कौन मानव जीवित है जो स्वयं को इस मसीहा का वैचारिक प्रतिनिधि कहलाने से इंकार करे! लेकिन व्यक्ति कितना भी चालाक क्यों न बने पर प्रकृति कुछ अधिकार सिर्फ अपने पास ही रखती है और वह उन्हें अपने योग्य नायकों को ही प्रयोग करने के अवसर देती है। वैसे तो मेरे ख्याल में भी भारतीय भूमि पर उत्पन्न प्रत्येक व्यक्ति गांधी की मानस सन्तति है लेकिन उनकी विरासत के प्रयोग का अधिकार तो केवल विवेक जैसे व्यक्तियों के ही पास रहा है और रहना भी चाहिए।

सिमी! विवेक के प्रति तेरा दृष्टिकोण निरा भावनात्मक है।....नीरू उससे पुनः कहती है।

क्योंकि कुदरत ने उसे निरपेक्ष चिन्तन का धनी बनाया है।....नीरू, सिमी की बात सुनकर अपलक ही उसके मासूम चेहरे को देखती रह जाती है। वह विवेक के प्रति उसके पवित्र स्नेह को स्वीकार करते हुए कहती है-ईश्वर की अनुकम्पा उस पर बनी रहे। वह मानवता के पथ का निरभीक पथिक बने।....लेकिन अब हमे घर चलना चाहिए। समय अधिक बीत चुका है और विवेक के बारे में नीरू की धारणा जानकर सिमी का मन अत्यन्त सन्तुष्ट होता है। वह उससे पुनः मिलने का वादा करके घर चली जाती है।

क्रमशः...